अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) ✠ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ✠ एक प्रति २ आना

वर्ष-३, अंक-१५ ✠ राजघाट, काशी ✠ शुक्रवार, ११ जनवरी, '५७

कॉंग्रेस वालों पर अधिकार !

हमको कॉंग्रेस वालों से मदद माँगने का पूरा अधिकार है, जो ढेबर-भाई ने हमें दिया है ! उसका उपयोग हमें करने दीजिये। कॉंग्रेस वाले कहते हैं, 'देखो बाबा, आपके काम में हम ही ज्यादा मदद करते हैं।' यह सही है, क्योंकि दूसरे लोग ज्यादा करते नहीं, इसलिए इनको मुफ्त में कहने का अवसर मिल जाता है और वे श्रेय ले लेते हैं। दूसरों का काम करीब-करीब शून्य है, इसलिए आप जो भी करते हैं, आप ही करते हैं, ऐसा मानना पड़ता है। लेकिन आग तो बड़ी लगी है। दूसरे लोग बहुत थोड़ा पानी डालते हैं और आप लोटा भर, पर कहते हैं, वह काफी है। परंतु जरूरत तो बालटियों से पानी डालने की है, इसलिए आपको इतने से ही संतोष नहीं कर लेना चाहिए।

आपको भी क्या करना है ? दबाव तो डालना है नहीं ! सारा काम प्रेम से ही करना है। —विनोबा

(कॉंग्रेस-कार्यकर्ताओं से, मदुरा, ३०-१२)

सर्वोदय और समाजवाद

(विनोबा)

'सर्वोदय' शब्द को बहुत से लोग मान्य करते हैं, फिर भी उसे यह कह कर टालने की भी कोशिश होती है कि यह उच्च शब्द है, शायद उतना हम न कर पायें, इसलिए "समाजवादी समाज-रचना" शब्द अच्छा रहेगा !

लेकिन यह "समाजवादी समाज-रचना" एक ऐसा गोलमटोल शब्द है कि उसके पचासों अर्थ होते हैं। उसका प्रयोग करना और न करना, दोनों बराबर है। हिन्दुस्तान के पूँजीवादी भी कह रहे हैं कि हमें "समाजवादी समाज-रचना" मान्य है। इसलिए अब उस शब्द से कोई बहुत ज्यादा हिन्दुस्तान का तारण होगा, ऐसा नहीं है। फिर, समाजवादी रचना में व्यक्ति और समाज के बीच एक झगड़ा भी माना जाता है। आजकल यूरोप में समाजवाद "उत्पादन बढ़ाओ और लोगों को सुखी करो," इतने में ही समाप्त हो जाता है। केवल चंद धंधों को सरकारी बना लिया और सरकार की सत्ता उस पर लागू की, इतने से ही आम जनता की शक्ति निर्माण नहीं होती है और न उत्पादन बढ़ाने और लोगों में आज से अधिक समृद्धि लाने की कोशिश से ही जनता की शक्ति निर्माण होती है। पूँजीवादी समाज-रचना में भी उत्पादन बढ़ाने का और सबको सुखी करने का विचार मान्य किया जाता है। हाँ, पूँजीवाद साम्ययोग नहीं मानता है, परन्तु सब लोग सुखी हों, ऐसा तो वे भी मान्य करते ही हैं। सबके 'समान सुख' की बात वे कबूल नहीं करते हैं, परन्तु वे सुखी हों, इतनी बात वे भी मान्य करते हैं। इसलिए जिसे 'वेलफेअर स्टेट'-कल्याणकारी राज्य-कहा जाता है, वह कोई जन-शक्ति बढ़ाने वाली चीज नहीं है। मैं मानता हूँ कि श्री-हर्ष का राज्य, राजराजसोळन और कृष्णदेव राय का राज्य 'वेलफेअर स्टेट' था। लेकिन इन लोगों के राज्य में जनता की कोई ताकत बढ़ी थी, ऐसा नहीं है। अकबर गया, जहाँगीर आया। वह गया, औरंगजेब आया। लोगों की हालत बुरी होने लगी। अकबर के राज्य में अच्छी हालत थी, मगर जनता में शक्ति निर्माण हुई होती, तो फिर कायम के लिए लोगों की अच्छी हालत हो जाती। पुराने राजाओं से न वह हो सका था, न पूँजीवादी राज्य-व्यवस्था में वह होता है, और न समाजवादी समाज-रचना की जो बात आजकल यूरोप में चल रही है, उससे ही होता है। आधुनिक लेखक इस बात को कबूल करते हैं। इसलिए वेलफेअर स्टेट या समाजवादी समाज-रचना कहने से हम कोई बहुत ज्यादा प्रकाश डालते हैं, ऐसा नहीं। इसलिए "सर्वोदय" नाम से जो सुन्दर शब्द अपनी सभ्यता में से निर्माण हुआ है, उसे कबूल करना चाहिए। उस शब्द को एक सुन्दर शब्द के तौर पर मान्य तो कर लें, पर शायद वैसा हम न कर पायें, ऐसे डर से विनम्र भाव से उसे दूर रखना भी हम गलत समझते हैं।

दो बिंदुओं के बीच

हमारे धर्म क्या कहते हैं ? हम मुक्ति के लिए कोशिश कर रहे हैं, हम मुक्ति-वादी हैं, ऐसा हम कहते हैं। हम मोक्ष से तो बहुत दूर हैं, लेकिन जहाँ ध्येय की बात आयेगी, वहाँ मोक्ष-साल्वेशन-से कम की बात हम नहीं करेंगे। सब धर्मवाले इसी शब्द का उपयोग करते हैं। इस शब्द का इस्तेमाल करने वाले हम लोग इस शब्द से बहुत ही दूर हैं। लेकिन फिर भी इस शब्द के बिना हमारा समाधान नहीं होता। आज हम जहाँ हैं, वह तो हमारा स्थान-बिन्दु है और जहाँ हमें जाना है, वह तो आखिरी, अंतिम बिन्दु है। वही हमारा लक्ष्यबिंदु है। दोनों बिन्दु निश्चित हैं। जब दोनों बिन्दु निश्चित होते हैं, तभी रास्ता बनता है। आज हम कहाँ हैं, आज हमारी हालत क्या है, इसीका स्पष्ट ज्ञान मनुष्य को होना चाहिए और हमें अंत में कहाँ जाना है, हमारा क्या लक्ष्य है, इसका स्पष्ट भान हमें होना चाहिए। अगर हम कोशिश करें, तो आज की हालत क्या है, उसका हमें ज्ञान हो सकता है। परंतु अंतिम लक्ष्य की कितनी भी कोशिश यहाँ रह कर करें; तो भी उसका पूरा ज्ञान नहीं हो सकता है। फिर भी उसका 'भान' होना चाहिए। किसी भी धर्मवाले से पूछो, "क्यों भाई, कहाँ जा रहे हो ? तुम्हें कहाँ जाना है ? तुम्हारा क्या लक्ष्य है ?" तो क्या जवाब मिलता है ?–"परमात्म-दर्शन।" या तो "मोक्ष।"–ऐसी भाषा वे बोलते हैं। लेकिन उसको मोक्ष की व्याख्या करने को कहेंगे, तो वह नहीं कर सकता है। परन्तु उसके

एक बड़ा सबक !

…अभी पूर्वी यूरोप में जो तीव्र उत्पात एवं संघर्ष हुआ, उसका एक बड़ा कारण था, आर्थिक असंतुलन। उद्योगों और खास कर बड़े उद्योगों पर जोर देने एवं जल्दबाजी का यह परिणाम था। फलतः कृषि को धक्का तो लगा ही, सारी अर्थ-रचना पर ही उसका बुरा असर हुआ। यह हमारे लिए एक बहुत बड़ा सबक है। … ग्रामोद्योगों, गृहोद्योगों और छोटे-छोटे उद्योगों का इसीलिए बहुत ज्यादा महत्त्व है और वह इसलिए है कि सबको काम हो, संतुलित उत्पादन हो और दैनंदिन व्यवहार की चीजें भी सहज प्राप्त होती ही रहें।

भारत की गरीबी का मुख्य कारण यह है कि ग्रामीण जनता सिर्फ खेती पर निर्भर रहने लगी और उसने ग्रामोद्योगों को छोड़ दिया। भारत तभी उन्नति करेगा, जब ग्रामीण जनता की उन्नति होगी। गाँवों में काम कम होता गया और उनकी जगह कोई दूसरी चीज नहीं आयी। और अगर आप यह समझें कि सरकार या सरकारी अफसर उनकी हालत सुधार देंगे, तो आप धोखे में ही हैं।

भारत में लोकतंत्र का वास्तविक आधार गाँव ही है।

लक्ष्मीबाईनगर ३,४-१-'५७ —जवाहरलाल नेहरू

www.vinoba.in

सामने भावना स्पष्ट है ! मोक्ष क्या नहीं है, यह बता सकेगा, लेकिन वह क्या है, यह नहीं बता सकेगा। हम अनंत विकारों से भरे हैं। पर वे विकार वहाँ नहीं हैं, जहाँ हमें जाना है और जिसे हम ईश्वर-दर्शन कहते हैं, मुक्ति कहते हैं, "साल्वेशन," परफेक्शन, पूर्णता कहते हैं। ये सारे अलग-अलग शब्द हम इस्तेमाल तो करते हैं, पर वह चीज क्या है, यह हम नहीं बता सकते। हाँ, वह क्या नहीं है, यह हम बता सकते हैं और वह है, यह भी हम जानते हैं। इसीको कहते हैं 'भान !'

हमें सर्वोदय का स्पष्ट भान होना चाहिए। इस शब्द को हमें छोड़ना ही नहीं चाहिए। जो इस शब्द को छोड़ते हैं, वे एक बड़ा भारी रत्न खोते हैं। उसका परिणाम यह हुआ है कि आज देश के सेवकों में दुविधा हो रही है। एक अजीब-सा दृश्य देश में दीख रहा है। एक बाजू कुल रचनात्मक कार्यकर्ता इकट्ठे हुए हैं, चाहे उनमें से कुछ काँग्रेस में, कुछ प्रजा-समाजवादी दल में और कुछ अन्यत्र एवं कुछ कहीं नहीं भी हैं; लेकिन उन सब लोगों का दिल "सर्वोदय" शब्द से जुड़ा हुआ है। दूसरे ऐसे लोग हैं, जो किसी-न-किसी कारण से इस शब्द को टालते हैं। पर इससे देश की शक्ति नहीं बन रही है। 'शिव' और 'शक्ति' अलग ही रहे हैं। मैं यह तमिलनाड़ की भाषा में बोल रहा हूँ। तिरुवाचकम् में है कि 'शक्ति तेरा रूप है, तू ही शक्ति है !' इस तरह जब शक्ति और शिव एक हो जाते हैं, तब भक्तों की सुरक्षा होती है ! परंतु शिव और शक्ति अलग पड़ जायँ, तो भक्त की क्या हालत होगी ? अगर माता-पिता ही दो पक्षों में आ गये, तो लड़कों की क्या हालत होगी ?

> इसलिए लोगों ने समाज-रचना करने की सत्ता जिन्हें सौंपी है, वे लोग और समाजसेवा की तीव्र भावना रखने वाले, इन दोनों के बीच जहाँ भेद आ जाता है, वहाँ देश की ताकत नहीं बनती है। सर्वोदय "शिवम्" है और जिसे आप राज्यसत्ता कहते हैं, वह "शक्ति" है। जब शिवम् से वह शक्ति अलग पड़ जाती है, तब शक्ति क्षीण होती है। शक्ति से शिवम् अलग पड़ता है, तो वह तो वैराग्यमान है ही। उनका वह वैराग्य कोई छीन नहीं सकता।

हमारी कोशिश है कि ये दोनों एक हो जायँ। उधर से भी कोशिश हो रही है कि दोनों एक हो जायँ ! वे कोशिश करते हैं कि सारे हमारे पक्ष में आयें। हम एक-दूसरे को खाने बैठे हैं ! हमें विश्वास है कि हम ही उन्हें खाने वाले हैं, क्योंकि यह "शक्ति" जड़ वस्तु है और यह "शिवम्" चेतन है। यह जहाँ जाता है, वहाँ हृदय का स्पर्श होता है। वह जहाँ जाती है, वहाँ लाठी जाती है। एक बाजू डंडा है। डंडे से भय पैदा कर सकते हैं। इससे ज्यादा डंडा कुछ नहीं कर सकता। डंडे से कभी नियमन नहीं होता है, भय ही निर्माण होता है। इसीलिए शास्त्रकारों ने यति, संन्यासियों के और ज्ञानियों के हाथ में दंड दिया, पर आज तो पुलिस के हाथ में दंड है। याने जिन्हें कम-से-कम अकल है, उनके हाथ में डंडा ! "दंड यतिन् कर"—रामराज्य का वर्णन करते हुए तुलसीदासजी ने कहा कि राम के राज्य में दंड संन्यासियों के हाथ में था, दूसरे किसीके पास दंड नहीं था। इसका मतलब है कि समाज का शासन ज्ञान और प्रेम से होना चाहिए, न कि कानून से।

हिंसा कानून के पीछे होती है, इसलिए वह बड़ा दुष्ट हो जाता है। अगर कानून ऐसा बने कि जिसके अमल के पीछे सेना न रखनी पड़े, तो कानून संन्यासी का ही कानून हो जायेगा। मान लीजिये कि हिंदुस्तान के चुने हुए ज्ञानी इकट्ठे हो जायँ और वे एक प्रस्ताव पास करें और फिर उसके अमल के लिए न कोई लश्कर है, न कोई योजना, तो हम समझते हैं कि उसका ज्यादा-से-ज्यादा अमल होगा। हर जमाने में कोई दस-बीस गांधी तो नहीं होते हैं, लेकिन फिर भी दस-बीस ज्ञानी होते हैं। वे अगर मिल कर काम करते हैं, तो गांधीजी के बराबर हो सकते हैं, ज्यादा भी हो सकते हैं। लेकिन ये ज्ञानी लोग ऐसे बेवकूफ हैं कि अपने प्रस्ताव के अमल के वास्ते लश्कर के बिना चलेगा नहीं, ऐसा मानते हैं। अगर वे ज्ञानपूर्वक चर्चा करके लोगों के सामने रखें कि हमारी यह राय है कि ऐसा किया जाय। हमने सर्वानुमति से यह निर्णय लिया है, तो हम समझते हैं कि उससे जितना अच्छी तरह से और हृदयपूर्वक अमल होगा, उतना उसके पीछे शस्त्रास्त्र का जोर लगाने से नहीं होगा।

तिरुवाचकम्, तिरुनायमुलि तिरुक्कुरल आदि हजारों साल पहले की संतों और धर्मों की किताबें हैं, पर उनकी सत्ता आज भी चलती है, तो क्या उनके पीछे दंडन् की सत्ता थी ?

(कल्लुपट्टी, मदुरा, २५-१२-५६)

—

काँग्रेस और सर्वोदय

(ढेबरभाई)

"हमें इस सम्बन्ध में भी स्पष्ट होना है कि केवल भौतिक समृद्धि के रूप में ही हम नहीं सोचते। मानव-जीवन केवल जड़-पदार्थ का एक पुतला नहीं है, उसमें जीवन-तत्त्व भी है। मानव अस्तित्व अथवा जीवन के इसी 'तत्त्व' का मानव समाज के लिए अधिक महत्त्व होना चाहिए। अतः भारत में समाजवाद को गांधीजी के सर्वोदय की ओर अधिक निर्दिष्ट होना चाहिए; भले ही हम गांधीजी के नये सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था के आदर्श तक न पहुँच सकें। अपने राष्ट्रपिता से जो अमूल्य निधि या धरोहर हमें प्राप्त हुई है, वह है, "पवित्र उद्देश्यों के लिए पवित्र साधन" का मन्त्र या जैसा कि वे कहा करते थे—'सत्याग्रह।' यह हमारे राष्ट्रीय जीवन का उद्देश्य तथा साथ ही साथ हमारा कार्यक्रम है। हम इस कारण, न तो वर्ग-संघर्ष के रूप में सोच सकते हैं और न ही अपने देश के लोगों के वर्ग को सामाजिक अपराधी मान सकते हैं।

भूमिसुधारों की दशा में भी हमें काफी ध्यान देना होगा। भूमि हमारे राष्ट्रीय जीवन का बुनियादी साधन है। भूमि-व्यवस्था तथा हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था के पुनर्गठन का हमारे नियोजन में केन्द्रीय स्थान होना चाहिए। भूदान और सम्पत्ति-दान के आंदोलनों से इन सुधारों को लागू करने के लिए एक अनुकूल वातावरण पैदा हो गया है। हमें इन्हें तर्कपूर्ण और स्वाभाविक परिणाम तक ले जाना है। मद्य-निषेध ने हमारे समाज-सुधार के संग्राम में एक नैतिक कवच का काम किया है और उसे स्वच्छ जीवन की चेतना से युक्त किया है। इसी तरह बुनियादी शिक्षा का सवाल है। एक उपयुक्त शिक्षा-पद्धति के द्वारा ही हम भारतीय समाज की ठोस नींव डाल सकते हैं। नये समाज के अन्दर उच्च चरित्र में आस्था और जीवन के जो मूल्य राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में होने चाहिए, प्रारम्भ से ही उनका निर्माण होना चाहिए।

(अध्यक्षीय भाषण से)

—

समाजवाद की जड़ें हिंदुस्तान की जमीन में गहरी जमाते समय हम अपने दस हजार साल पुराने भूतकाल से अपने को अलग हरगिज नहीं कर सकते। लेकिन हमें बैलगाड़ी की मनोवृत्ति को भी ऐसे वक्त छोड़ना होगा, विज्ञान का रास्ता वह अवरुद्ध न करें।

—जवाहरलाल नेहरू

लक्ष्मीबाईनगर, ३-१-'५७

—

दूसरा कोई रास्ता नहीं

अन्न के मामले में आत्म-निर्भरता हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है और अन्न की उपज बढ़ाने के लिए हमारे पास जितने भी साधन हैं, उनमें चीन की पद्धति ही सर्वोत्तम जान पड़ती है। यांत्रिक साधन इस समय अधिक कारगर न हो सकेंगे। हमें जान लेना चाहिए कि चीन में इधर अन्न के उत्पादन में जो वृद्धि हुई है, उसका श्रेय सहकारी कृषि को है। पिछले कुछ वर्षों के भीतर चीन में अन्न की उपज ३० प्रतिशत बढ़ी है। इसलिए हमें भी वही विधि अपनानी चाहिए और किसानों को समझा-बुझा कर प्रेरित करना चाहिए कि वे चीन का तरीका अपनायें। इस मामले में जोर-जबर्दस्ती या कानून का आश्रय लेना ठीक नहीं है। चीन में जोर-जबर्दस्ती से काम उतना नहीं लिया गया, जितना किसानों को असलियत समझा कर उन्हें स्वेच्छा से सहकारिता की ओर आकृष्ट होने में।

चीन के अतिरिक्त बल्गेरिया में भी यही रीति काम में लायी गयी। वहाँ भी वैयक्तिक अथवा सामूहिक कृषि की अपेक्षा सहकारी कृषि का ढंग अपनाया गया और पर्याप्त लाभ देखे गये। बल्गेरिया में इस समय ७७ प्रतिशत कृषक-परिवार सहकारिता के आधार पर कृषिकार्य करते हैं तथा देश की ७५ प्रतिशत कृषि-भूमि सहकारी समितियों की व्यवस्था के अन्तर्गत है। किन्तु वहाँ भी किसानों पर कोई दबाव नहीं डाला गया। स्वेच्छा से ही किसान सहकारिता की ओर आकृष्ट हुए। जिन किसानों ने सहकारी समितियों को अपने खेत दिये हैं, वे आज भी अपनी भूमि के मालिक हैं। इन किसानों की आय व्यक्तिगत रूप से कृषि करने वालों की अपेक्षा २० से ३० प्रतिशत तक अधिक है।

हमारे देश में सहकारिता बहुत सफल इसलिए नहीं हो पायी है कि किसानों को ठीक ढंग से समझाने-बुझाने और उसके लाभ का बोध कराने का प्रयत्न भलीभाँति नहीं किया गया है। अधिकारियों को अफसरी प्रवृत्ति छोड़ कर किसानों के साथ घुल-मिल जाना चाहिए, तभी वे कुछ काम कर सकते हैं।

(अंग्रेजी से)

—

—जवाहरलाल नेहरू

www.vinoba.in

यज्ञ की पूर्णाहुति का समय आ गया है !

(बाबा राघवदास)

प्रश्न : आपका यह आंदोलन यदि जनता की भलाई के लिए है, तो वह सफलता की ओर क्यों नहीं अग्रसर होता ? अभी तो उसने बहुत कम सफलता प्राप्त की है। तब आप कैसे विश्वासपूर्वक कहते हैं कि एक साल के कम समय में यह आंदोलन सफल होकर ही रहेगा ?

उत्तर : हम वैसा पूरा प्रयत्न करते हैं और निष्ठापूर्वक जप करते हैं, अतः यह सफल होकर रहेगा। इसके सफल होने के और भी कई कारण हैं। एक तो हम इसे आंदोलन या क्रांति नहीं मानते, बल्कि यज्ञ मानते हैं। यज्ञ का काम भगवान् पूरा करता है। जैसे उसमें पूर्णाहुति का एक दिन नियत कर दिया जाता है और लोग जुट पड़ते हैं और यज्ञ पूरा हो जाता है, उसी प्रकार इसमें भी १९५७ तक पूर्णाहुति की तिथि विनोबाजी ने निर्धारित कर दी है, और हमारे कार्यकर्ता दूने उत्साह से इसे सफल बनाने के लिए जुट रहे हैं, तो हम कैसे विश्वास करें कि हमें भगवान् मदद न करेगा और सफलता न प्राप्त होगी !

यह बात हम अपने अनुभव के भी आधार पर कहते हैं कि जनता पूर्ण सहयोग देती है और सारा भार लेकर यज्ञ को पूर्ण कर देती है। ऐसा हमें बहुत बार अनुभव हुआ। हमने अपने जिंदगी में कई यज्ञ किये हैं और काम किस प्रकार पूरा हुआ, यह देख कर हैरत होती है।

सन् १९३३ में हमने बरहज-आश्रम (गोरखपुर) से डेढ़ मील दूर तक तालाब खोदने का "वरुण-यज्ञ" किया। सात दिन का समय था, जेठ के दिन थे और जमीन सख्त हो रही थी। पर हम संकल्प लेकर जुट गये। मैंने देखा कि एक घंटा खोदने से ही मेरे हाथों में छाले पड़ गये। परमेश्वर की इच्छा ! दो दिन शाम को वर्षा हुई और सात दिन में तालाब खुद गया। दुबारा सन् १९३४ में हमने "महाविष्णु-यज्ञ" किया। बिहार में उन दिनों भूचाल आया था। राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबूजी की राय से हमने दरभंगा जिले में कार्यकर्ताओं का एक दस्ता भेजा था। कई हजार रुपये बरहज-बाजार से इकट्ठा करके भेजे। वहाँ उस दस्ते ने कुँए से रेती निकालने का काम किया। उस काम में जनता से पैसा माँगने के पक्ष में हम न थे। इसलिए हमने जप व नाम माँगा। लेकिन जब यह काम शुरू हुआ, तो लोगों ने न केवल जप का पाठ किया, वरन् उन्होंने बिना माँगे हमें बड़ी सहायता भी दी। उन व्यक्तियों ने अपने आप ही ८० मन आटा भेजा। अगर मैं सहायता भी माँग करता, तो १० मन से अधिक नहीं मिलता। परिणामस्वरूप हम दरभंगा जिले में काम करने में पूर्ण सफल रहे। इसके बाद आया हमारा "स्वराज्य-यज्ञ"। सन् १९३६ में हम लोगों के खिलाफ गोरखपुर जिले में चुनाव में, ११ राजा खड़े हुए थे। उन्होंने ५ लाख रुपये खर्च करने की घोषणा की और इधर उस समय कांग्रेस की हालत इतनी कमजोर थी कि हम पाँच रुपये महीने का किराये का जो दफ्तर लिये हुए थे, उस पर भी ३ महीने का किराया बाकी था ! आटे, दाल, चावल के लिए बनियों का १७ रुपया हम पर उधार था। हमने जिला-कांग्रेस-कमेटी की मीटिंग की। उसमें हमारे मेम्बरों ने इतना पैसा इकट्ठा कर लिया कि उससे हमारा कर्जा भर पाया। फिर हमने ५०० मील पैदल यात्रा करने का संकल्प किया। गाँव-गाँव में हमने सिर्फ तुलसी-पत्र का निमंत्रण भेजा। हमने देखा कि एक महीने की पद-यात्रा के बाद ३०० वालंटियर (स्वयंसेवक) पदयात्रा के लिए निकल पड़े। इसका फल यह हुआ कि हमारे सभी प्रतिनिधि जीते। कम वोटों से नहीं, बल्कि ३५-३५ हजार वोटों से !

इसके बाद १९३६ में भी एक बाँध बाँधने की बात हमारे सामने आयी। गोरखपुर में गगहा नामक स्थान में साढ़े चार मील लम्बा बाँध बाँधना था। हमने ७ दिन का संकल्प लिया। साढ़े तीन मील ६ दिन में बँध पाया था। आपको सुन कर आश्चर्य होगा कि एक दिन में वह पूरा बन कर तैयार हो गया। फिर १९५० की बात है कि साढ़े चार मील लम्बी भूमि पर नाला खोदना था। इससे बलिया जिले की ८ हजार एकड़ भूमि खराब होती थी। सरकार द्वारा ध्यान भी न देने से बलिया में खून-खराबी हुई और वहाँ के एक हथोज गाँव का नाम 'मास्को' रख दिया गया ! भारत के लिए यह चुनौती थी कि आजादी के तीन वर्ष बाद ही यहाँ 'मास्को-स्टालिन ग्राड' बनने लगें ! हमने २५ मई को संकल्प किया कि १५ जून से २४ जून तक इसे खोद डालेंगे। काम शुरू हुआ। १६-१७ तारीख को वर्षा हुई, पर वर्षा में भींगते ५ हजार लोग काम करते रहे और २३ तारीख तक काम चला। लेकिन अभी काम का काफी हिस्सा पड़ा था। २४ तारीख को ५ हजार लोग और जुट पड़े, जिसमें २५० स्त्रियाँ भी थीं। यहाँ तक कि उनमें ऐसी नयी विवाहिता बहुएँ भी काम के लिए आयीं, जिनके पाँव का महावर भी अभी छूटा नहीं था और २४ तारीख को काम पूरा हो गया। कुल १५२॥) रुपये में यह नाला खुद कर तैयार हो गया, जब कि सरकारी योजना ८० हजार रुपये खर्च करने की थी।

इसी प्रकार विनोबाजी के इस यज्ञ को भी पूर्णाहुति निर्धारित हो चुकी है, जो सबके सहयोग और भगवान् की कृपा से पूरी होकर रहेगी। हम तो इसकी प्रतिष्ठा भगवान् के हाथ में मानते हैं। हम प्रयत्न करेंगे और वही पूरा करेगा।

पावन वेला

अंबर तक जयघोष छा रहा पावन पूजन-वेला है।
आज धरा मां के मंदिर में भूपुत्रों का मेला है॥
अँगड़ाई ले जाग रहे हैं युग-युग से सोने वाले
मिले परस्पर बाँह बिछा, पाने वाले, खोने वाले
देख रहे आँखें फैलाये सब जादू-टोने वाले
प्रेम-डोर में बँध आये, जो एक न थे होने वाले
किस धुन वाले ने छेड़ा यह राग नया अलबेला है॥

कितने यहाँ जलन ले आये विष की कर बौछार चले
कितने धन, दारा, परिजन में अपना तनमन वार चले
आये कितने वीर धरा का कर पल भर शृंगार चले
कितने ऐसे चले अमृतमय, औरों को भी तार चले
धन्य उन्हींका जीवन, जिनसे जग में हुआ उजेला है॥

रवि थकते थे नहीं जहाँ, उन साम्राज्यों की नाक कहाँ
काल-पुरुष से लोहा ले, जो वे गांडीव-पिनाक कहाँ
धन-धरती तो उसकी, जिसने इनको हँस-हँस छोड़ दिया
पानी जो दोनों बाहों में रखे बाँध तिराक कहाँ
त्याग-मंत्र सिखलाया जिसने, विश्व उसीका चेला है॥

गाँव-गाँव में गाता कोई बापू का संदेश चला
छयासठ कोटि पगों से उठ कर यह लो सारा देश चला
कोटि कोटि, हलधर के जोड़े चले, नील घनमाला संग
भूमि चली, नभ चला, चराचर चले, स्वयं सर्वेश चला
सत्य-अहिंसा-साधक जग में किसने कहा अकेला है॥

(जानीबीघा, गया के भूदान-समारोह में पठित) —गुलाब खंडेलवाल, गया

www.vinoba.in

विनोबा-प्रवचन-सार

आजकल हमारे समाज में स्त्रियों की दशा किसी गुलाम से कम नहीं है। बड़े घर की स्त्रियाँ पुरुषों के भय के कारण बाहर नहीं निकल पातीं। यह कितनी विडम्बना है कि वे परिचित पुरुषों के सामने नहीं बैठतीं, भले ही अपरिचित पुरुषों के सामने आयें। पिता की सम्पत्ति पर कन्या का अधिकार भी नहीं माना जाता। भारतीय संसद में एक कानून स्वीकार किया गया है, जिसके अनुसार अब कन्या को भी पिता की सम्पत्ति में हिस्सा मिलेगा। इधर कई वर्षों तक इस प्रश्न पर विवाद चलता रहा। बहुत से लोग कहते रहे कि कन्या को पिता की सम्पत्ति में हिस्सा नहीं मिलना चाहिए, क्योंकि विवाह होने के बाद वह दूसरे के घर चली जाती है। पुत्रों के लिए तो शिक्षा आदि में लोग खूब पैसे खर्च करते हैं, परन्तु कन्याओं को जब पढ़ाने का प्रश्न आता है, तो यही कहा जाता है कि व्यर्थ पैसे कहाँ से खर्च किये जायँ। और फिर उसे पढ़ाने से लाभ क्या? वह तो दूसरे के ही घर जायगी और वहाँ जा कर उसे गृहस्थी ही तो देखनी पड़ेगी। संसद में जो कानून स्वीकार किया गया है, उसका भी पुरुषों ने बहुत विरोध किया, लेकिन उनकी चल न सकी और उस कानून पर अब अमल होगा ही। इतना ही नहीं, स्त्रियों को दबाने के लिए तरह-तरह की बातें पुरुष-समाज करता रहता है। वह कहता है कि स्त्रियों को बाहर नहीं निकलना चाहिए, सार्वजनिक कार्यों में हिस्सा नहीं लेना चाहिए। उसे हर अवस्था में पुरुष के अधीन रहना चाहिए। उसके आजाद होने से समाज बिगड़ जायगा। असल में स्त्रियों को अपने स्वार्थवश ही पुरुष बंधन में रखता है। वह सोचता है कि अगर स्त्रियों को किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता दी गयी, तो भोजन मिलना ही मुश्किल हो जायगा और बच्चों की देख-भाल भी ठीक ढंग से नहीं हो सकेगी, क्योंकि स्वयं वह इस काम से जी चुराता है। लेकिन यह सब गुलामी दूर होनी ही चाहिए। स्त्री और पुरुष गाड़ी के दो पहिये हैं। दोनों पहिये साथ चलेंगे, तभी गाड़ी आगे बढ़ सकेगी।

(चंद्रपुरम्, कोइंबतूर, ८-१०)

हम मानते हैं कि स्त्री पर पुरुष की सत्ता नहीं होनी चाहिए, न स्त्री की सत्ता पुरुष पर होनी चाहिए। आज दोनों होता है। कहीं पुरुष की सत्ता स्त्रियों पर चलती है, तो कहीं स्त्री की पुरुषों पर चलती है, ऐसा दीखता है। कई पुरुष इतने कामासक्त होते हैं कि स्त्रियों की हर बात मानते हैं, ऐसा भी कहीं दीखता है और उसी कारण से ऐसा भी देखा गया है कि वे स्त्रियों को दबाते हैं! एक को wooing (प्रेमाराधना) कहते हैं और दूसरा उनको दास बनाकर रखना चाहता है। दोनों का अर्थ एक ही है!

विवेचक जनता

हम कहते हैं, जनता मूर्ख है। लेकिन जनता बहुत अक्ल की दृष्टि रखती है। वह हम लोगों की बराबर परीक्षा करती है। हिन्दुस्तान के गरीब लोगों की सेवा संतों ने की है, इसीलिए जब उसको मालूम होता है कि हम सेवक हैं, तो वह हमको संत की कसौटी से कसती है। लोगों का जीवन-स्तर गिरा हुआ है, लेकिन उनका "स्टैण्डर्ड आफ थिंकिंग"—चिंतन का स्तर ऊँचा है और इसीलिए वे कार्यकर्ता और सेवक की छोटी-छोटी बातों पर भी ध्यान देती हैं। एक शिक्षित मनुष्य शौच करके आया और एक मिनिट में उसने हाथ साफ कर दिया! देहाती ने पहचान लिया कि यह जंगली है, हाथ कैसे धोना, यह भी उसको मालूम नहीं है, तो वह हमारी सेवा क्या करेगा? दो-चार दफ़ा जरा ठीक मिट्टी मल करके हाथ धोना चाहिए। ऐसी सादी-सी बात जिसको नहीं आती है, वह सेवक अपना सेवक नहीं है, ऐसा वे मानते हैं। तो हमारा व्यक्तिगत आचरण भी निर्मल और स्वच्छ होना चाहिए। वह जितना निर्मल और स्वच्छ रहेगा, उतना हमारा कार्य जल्दी होगा।

आस्तिक की पहचान

नास्तिक कहता है, 'हमको ऐसा ईश्वर नहीं चाहिए, जो इतनी विषमता सहन करता है। उसको मानने वाले आस्तिक लोग अपने प्रत्यक्ष जीवन में दूसरों को ठगते हैं, सताते हैं, चूसते हैं, फिर भी कहते हैं कि हम ईश्वर के भक्त हैं। तो हमको ऐसी ईश्वर भक्ति भी नहीं चाहिए और मुक्ति भी नहीं चाहिए।' अब, जो नास्तिक और आस्तिक कहलाते हैं, उन दोनों को तराजू के पल्लों में हम तौलते हैं, तो हमें वे बराबर-बराबर मालूम होते हैं। हमको उनमें कोई भेद नहीं मालूम होता है।

वास्तव में आस्तिक वे हैं, जो एक परिवार में जैसे हम बरतते हैं, वैसे सबके साथ समान बरतने की कोशिश करता है। जब तक हम अपने सुख को दूसरों के सुख से अधिक महत्त्व देते हैं, तब तक हम आस्तिक नहीं हैं। आस्तिक का लक्षण ही वही है, जो अपने सुख-दुःख की बराबरी में दूसरे का सुख-दुःख समझेगा, बल्कि एक कदम आगे उठा कर दूसरे के सुख-दुःख की चिन्ता करेगा। इसीको सर्वोदय कहते हैं। सर्वोदय यानी 'सबका भला, सबके पीछे मेरा भला।' सबके पहले मैं और बाद में सब, यह सर्वोदय नहीं है। यह तो सर्वनाश का लक्षण है, क्योंकि हर कोई यदि यह कहेगा कि मैं पहले। तो हर कोई पहले नहीं कहा जा सकता है। फिर उनकी टक्कर हो जायगी, इसका ही नाम सर्वनाश है। इसके बदले में हम पीछे रहेंगे, ऐसा कहेंगे तो टक्कर नहीं होगी। आप आगे बढ़िये मैं पीछे आता हूँ, इस तरह जब सब लोग कहेंगे, तब किसी की किसी के साथ टक्कर नहीं होगी और सर्वोदय होगा।

(जलकंठपुरम्, सेलम, १९-८)

सबकी सेवा में ही सुख है

हमारे पाँव जमीन पर चलते हैं और हाथ ऊँचे हैं! हाथ ऊँची जाति के और पाँव नीची जाति के हैं। परंतु जब हम यात्रा करके आते हैं, तो स्नान करते हैं। उसमें १५-२० मिनिट लगते हैं, जिसमें से ५-७ मिनट हमारे हाथ हमारे पाँवों की सेवा करते हैं। पाँव इतना खुश हो जाता है कि वह कहता है, 'बाबा जितना चाहेगा, उतना मैं चलूँगा, क्योंकि बाबा उच्च-नीच भाव नहीं रखता है, ऊँचे हाथों से मेरी सेवा करता है।' अगर हाथ कहेगा कि 'मैं ऊँचा हूँ, मैं गाँव की सेवा नहीं करूँगा', तो पाँव कहेगा कि 'मैं भी नहीं चलूँगा। फिर देखें, तुम्हारी भूदान-यात्रा कैसे चलती है! तुम्हारे ऊँचे हाथों से चलने दो भूदान-यात्रा!' ऐसी हालत में बाबा क्या करेगा? इसीलिए वह ऊँचे हाथों से पाँवों की सेवा करता है।

इसी तरह गाँव के सारे लोग याने एक शरीर ही है। हम सारे ऊँच-नीच भाव छोड़ कर सबकी सेवा करेंगे, तो सब सुखी होंगे।

(एडयारपालयम्, कोइंबतूर, २४-९)

सद्गति कैसे मिले?

एक भाई ने प्रश्न किया कि 'हमें सद्गति कैसे मिले?' इस प्रकार के प्रश्न हमारे देश में उठते हैं, क्योंकि भारत के लोग लोकोत्तर जीवन के संबंध में विचार किया करते हैं। यह विशेषता भारत की ही है। हमारे यहाँ यह माना जाता है कि वर्तमान जीवन अखण्ड शाश्वत जीवन का एक भाग मात्र है। हम मानते हैं कि इस जीवन के पूर्व भी हम थे और इस शरीर का पात होने पर भी हमारे जीवन का प्रवाह चलता रहेगा। यह प्रवाह अखण्ड, अनंत है। वर्तमान शरीर का पात होने पर जीवन की इतिश्री नहीं हो जाती। इसीलिए यहाँ के लोग जीवन के अनंत प्रवाह के संबंध में बराबर विचार किया करते हैं। अगर सही अर्थों में हम यह समझ लें, तो हमारे जीवन का ढंग ही बदल जाय। हजरत नूह को भगवान् ने बीस हजार साल की जिन्दगी दी थी और वे इस बात को जानते थे। फिर भी एक छोटी-सी झोंपड़ी में वे इसलिए रहते थे कि बीस हजार साल की छोटी-सी जिन्दगी के लिए मकान और महल क्या बनवाना! क्योंकि अनंत काल-प्रवाह में बीस हजार बरस की बिसात ही क्या! और एक हम हैं कि छोटी-सी मामूली जिन्दगी में लूट-खसोट और राग-द्वेष का बाजार गर्म रखते हैं। जो असल बात समझ जायगा, वह भोगों से दूर रह कर सबकी सेवा में ही अपने को रत रखेगा। ईश्वर ने हमें मनुष्य का चोला इसीलिए दिया कि हम सबकी सेवा करें, धर्म का संपादन करें, न कि भोग भोगें। शरीर सेवा के लिए है, फिर भी जब तक है, तब तक उसे कायम रखने के लिए आहार जरूरी है। इसलिए उचित यही है कि जो जरूरी है, वही इसे दिया जाय, भोगों में न फँसाया जाय।

प्रश्न उठता है कि सद्गति क्या चीज है? ईश्वर तटस्थ भाव से हमारे कर्म देखा करता है और हम जो कुछ करते हैं और वैसा ही फल देता रहता है। जो आग में हाथ डालेगा, वह जरूर जलेगा। ईश्वर तो निमित्त मात्र है। सद्गति और दुर्गति ईश्वर की मर्जी पर नहीं है। वह तो हमारे ही कर्मों पर निर्भर है। जिसे मरने के पहले सद्गति मिली हो, उसे मरने के बाद भी मिलेगी। मरने के बाद किसे सद्गति मिलेगी, किसे नहीं मिलेगी, इसकी पहचान तो यहाँ भी हो सकती है। जिसके चित्त में काम, क्रोध, लोभ, मत्सर भरा है, उसे सद्गति नहीं मिल सकती। मन शान्त और निर्विकार रहने का नाम ही सद्गति है। मन में अगर प्रेम है, शान्ति है, अक्रोध है, तो आज ही सद्गति मिली समझो।

(कल्लापालेदर, कोइंबतूर ५-१०)

---

www.vinoba.in

महाराष्ट्र के अनन्य संत स्व. गाडगे बाबा

(उत्तमराव कंकाळे)

इस भूतल पर कुछ ऐसे महाभाग होते हैं, जो संसार से शरीर-रूप से चले जाने के पश्चात् भी सूर्य-चन्द्र की तरह अपने सेवाकार्य से अजर-अमर होते हैं। इस महान् परम्परा के अधिकारी पूजनीय श्री गाडगे बाबा थे।

पू० गाडगे बाबा का जन्म १८७६ में अमरावती जिले के कोतेगाँव गाँव में एक धोबी के घर में हुआ। पिता बचपन में ही स्वर्गवासी हुए, तो अति गरीबी का सामना करना पड़ा। आखिर दापुरा (अकोला) गाँव में मामा के यहाँ गये। सन् १८९२ में आप गृहस्थ बने। १९०५ में आपको एक महान् विभूति का दर्शन हुआ, तो इसी वर्ष श्रीक्षेत्र ऋणमोचन से लौटने के पश्चात् गृहस्थी पर तुलसीदल रख-कर जनताजनार्दन की सेवा के लिए अपना सारा जीवन अर्पण कर दिया। इनका पूर्व नाम 'डेबूजी' था, पर गृहस्थ जीवन का परित्याग करके फूटा हुआ मटका, टूटी हुई बाँस की लकड़ी और फटे हुए कपड़ों को धारण करके वे आमरण इसी पोषाक में प्रसन्नता से दीनों की सेवा में लगे रहे। हाथ के 'मटके, याने 'गाडगे' के कारण आप 'गाडगे महाराज' नाम से प्रसिद्ध हुए।

श्री गाडगे महाराज किसी मठ, संप्रदाय या परंपरा के सन्त नहीं थे, न उन्होंने किसी से दीक्षा लेकर किसी को गुरु बनाया था। एक ही गुरु, एक ही भगवान था जनतारूपी जनार्दन! न उन्होंने धर्मग्रंथ का, न शास्त्रपुराण का अध्ययन किया, न किसी पाठशाला में जाकर सीखा। गरीब घर में और नीच जाति में जन्म लेने के कारण इस समाज पर होने वाले सामाजिक अन्याय-अत्याचार को उन्होंने अति निकट से देखा। अनेकों आपत्तियों के अनुभवों के वे एक खजाना थे। इसी कारण उनके सरल, पवित्रतम और दया भरे हृदय से पिछडे हुए, दीन-दलित समाज के उद्धार की टीस जाग उठी, हृदय बोलने लगा, वाणी का मौन भंग हुआ और ज्ञान की गंगा बहने लगी। वाणी वेद-सूक्त-समान मानी गयी। संतों ने कहा ही है, साधु-हृदय पुरुष की वाणी ही 'वेदवाणी' मानी जाती है। सेवा के लिए उन्होंने लगातार यात्राएँ कीं। वे कहते—"गंगा बहती भली, साधु चलता भला।"

वैराग्य का भंडार

उनका जीवन 'सादगी और उच्च विचार-धारा' का मूर्तिमंत प्रतीक था। फटे बाँस का डंडा, फूटे मटके का टुकड़ा और बदन पर फटे कपड़े की चिंधियाँ, यही उनकी वेशभूषा थी और यही उनका शृङ्गार था। उन्होंने हजारों अन्धों, गूगों, लंगड़ों, महारोगियों, पीड़ितों को रेशम के भी वस्त्र दिलवाए लेकिन खुद जैसे के वैसे ही रहे। लोगों को मिष्टान्न भी खिलाया, मगर खुद रूखी-सूखी ही खाकर हरि गुण गाया करते थे। कई धर्मशालाएँ, पाठशालाएँ, छात्रावास, कुँएँ, मन्दिर, नदीघाट उन्होंने बनवाये, लेकिन खुद के निवास का ठिकाना भी नहीं था। वे आकाश को निसर्ग निर्मित मकान समझ कर या पेड़ के नीचे समाधि की तरह नींद लेते थे। लोगों ने लाखों रुपयों की संपत्ति उनके चरणों में समर्पण की, किन्तु उसका सारा विनियोग उन्होंने जनसेवा के लिए ही किया। वे विश्वकुटुम्बी ही थे! सभी जाति, पंथ, संप्रदाय और धर्म के लोग उन्हें समान भावना से पूज्य मानते थे। वे अपने गृहकुटुम्बी जनों के लिए इतने विरक्त थे कि उनकी माता, लड़का और लड़की मरने पर उनको दो साल तक इसका पता भी नहीं चला और जब पता चला, तो 'ऐसे मेले कोट्यानुकोटी, काय रडूं एकासाठीं' (ऐसे करोड़ों गये, एक के लिए क्या रोना!) कह कर संकीर्तन करने लगे! अपने शरीर स्वास्थ्य के लिए भी वे बहुत उदासीन थे। भूखे रहना, कहीं भी खाना, कहीं भी सोना, रात-दिन परिश्रम करना और बीमार पड़ने पर भी दवा नहीं लेना और जब देखो तब भगवान् का भजन गाते हुए झाड़ू लगाना, औरों से लगवाना और दीन-दुःखियों के दुःख को मिटाना यही उनकी भक्ति थी। स्वागत-समारोह तो दूर, किसी को अपने चरण तक छूने नहीं दिये।

वे दया भावना की साक्षात् मूर्ति थे। किसी भी जीवों की हत्या उनको नहीं भाती। कई जगह तो प्राणियों की हत्या रोकने के लिए उन्हें अपने प्राण की बाजी भी लगानी पड़ी। परिणामस्वरूप महाराष्ट्र में हजारों जगह देवी-देवताओं के नाम पर होने वाली प्राणी-हिंसा बंद हुई। फिर भी कमल-पत्रवत् यह महामानव अनासक्त था। फकीर की तरह रहता। किन्तु अध्यात्म का वह बादशाह ही था। गीता की स्थितप्रज्ञता की-सी उनकी अवस्था थी, गीता उनका जीवनाधार था और भगवान् का भजन ही उनका जीवन था। 'गोपाळ, गोपाळ, देवकीनंदन, गोपाळ', यह उनका सबसे प्रिय भजन था। लाखों यह भजन गाते। नाम में वह जादू था कि विशाल जनसागर हिलोरें ले-लेकर दौड़ कर आता था।

अनेक शराब, जूवा, काला बाजार, अनैकतिकता आदि दुर्व्यसन छोड़ते, अनेक घर बार तज कर मानव सेवा में लगते और अंधश्रद्धा में से लोगों को उबार कर धर्म का अधःपतन बचाते।

महाराष्ट्र उनके जितना किसीने 'पादाक्रांत' नहीं किया होगा। एक झंझा के समान वे रात-दिन हरिभजन करके लोगों को जगाते रहते थे। लोगों से कहते, 'भगवान् का स्मरण करो; लेकिन उससे कुछ माँगो मत। बकरी-मुर्गी काटो मत, शराब पीओ मत, कर्ज लेकर तीर्थ-यात्रा भी करो मत।' वाणी उनकी प्रसन्न और प्रभावपूर्ण थी। विनोद, मनोरम और करुणा भीतर भरी हुई। उनका कीर्तन सुन कर आजन्म शराब छोड़े हुए असंख्य लोग देखे हैं, ऐसा श्री दांडेकरजी ने लिखा है।

इस तरह अन्तिम क्षण तक जनता-जनार्दन की सेवा का ही ध्यान और कार्य करते रहकर और योगी का जीवन जीकर यह दैवी पुरुष अमरावती (बंबई राज्य) के निकट हनुमान मंदिर के परिक्षेत्र में 'हे रामा!' कहते हुए चल बसा।

('श्रीगुरुदेव' से सादर)

मृत्यु कैसी चाहिए? मनुष्य काम करते करते ही मरे! लोग भी कहें कि अरे बाबा, अभी-अभी तो उसे काम करते देखा था! कहें कैसे कि वह चला गया?"

—संत गाड़गे बाबा

स्वर्गीय आपटेजी!

(विनोबा)

अभी महाराष्ट्र में आपटे गुरुजी नाम के एक महापुरुष चले गये! मुझसे सात-आठ साल वे बड़े थे। मेरे बहुत प्यारे मित्र थे। तीव्र वेदना में भी वे धैर्य और शांतिपूर्वक रहे। उनकी सेवा-वृत्ति, स्नेहार्द्रता, रसिकता, वात्सल्य और तड़प उनके मौलिक गुण थे। धुलिया-जेल में अत्यंत एकाग्रता से 'गीता-प्रवचन' सुनने वाले जमनालालजी, साने गुरुजी और आपटे गुरुजी के नाम सतत मेरे ध्यान में रहते हैं। गीता-प्रवचन के कारण तो उन्होंने अपना सारा जीवन ही कृष्णार्पण कर दिया था। ऐसा भक्तिमय उनका जीवन था।

उन्होंने मरने के पहले अपने शव का दान वहाँ के हॉस्पिटल को देने के लिए कहा। वे गुरु थे, ब्राह्मण थे। विद्यार्थियों को विद्यादान देने का उन्होंने संकल्प किया था। उनको लगा कि अपने शरीर का भी अगर विद्या-र्थियों की ज्ञानवृद्धि के लिए उपयोग होता है, तो अच्छा है। शरीर-ज्ञान के लिए शवच्छेदन करना पडता है। वैसे तो इस काम के लिए लाचारों के शव लिये जाते हैं और हॉस्पिटल में उनका उपयोग किया जाता है। इस पर आपटे गुरुजी ने एक लेख लिखा था कि इस तरह क्यों होना चाहिए, हम शवदान क्यों न दें? मरने के पहले शवदान किया, इसलिए मृत्यु के बाद उनके शव को स्मशान में पहुँचाने के बजाय हॉस्पिटल में ले गये और वहाँ डाक्टर को शव सुपुर्द करके कुछ लोगों ने व्याख्यान किये, उनमें उनकी पत्नी भी बोली। उसने अपना मंगलसूत्र निकाल कर हॉस्पिटल को दान दे दिया। मंगलसूत्र तब तक पहनना होता है, जब तक पति होता है। पति की मृत्यु के बाद मंगलसूत्र पहनने का स्त्रियों को अधिकार नहीं है। उन्होंने कहा कि जहाँ मेरे पति का शव जा रहा है, वहाँ मेरा मंगलसूत्र भी जाना चाहिए।" आपटे गुरुजी शवदान के बड़े पक्षपाती थे, इसलिए उन्होंने शवदान जारी किया। एक दफा समाज में देने की रूढ़ी हो जाती है, तो धीरे-धीरे देने की प्रक्रिया समाज में बढ़ जायगी। आपटे गुरुजी की यह कहानी विस्तार से इसलिए कही कि हिन्दुस्तान इतना बड़ा देश है कि ऐसी कितनी ही घटनाएँ होती हैं, पर दूसरे प्रांतों को उसका पता भी नहीं चलता है। यह ऐसी घटना है कि उसकी जानकारी हर एक को होनी चाहिए। यह छोटी चीज नहीं है। हिंदुओं की एक भावना रही है कि मनुष्य के शरीर का दहन होना ही चाहिए। उसके बिना धार्मिक संस्कार होता ही नहीं है। परंतु आपटे गुरुजी ने वे विचार छोड़ दिये। व्याख्यान देने वाले में से एक भाई ने एक अधिक बात बतायी कि जैसे पुराने जमाने में वृत्रासुर को हत्या करने के लिए दधीचि ऋषि के पास इन्द्र ने उनकी हड्डी की माँग की, तो उन्होंने अपनी हड्डी दे दी थी, वैसे ही आपटे गुरुजी ने अपना शव देश के काम के लिए दे दिया।

जिसके हृदय में प्रेम भरा है, वह अपनी हड्डी तक दूसरों को दे देता है!

(पत्र और भाषण से, १२-१२-५६)

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

११ जनवरी सन् १९५७

तालीम के त्रीदोष !

(वीनोबा)

अंग्रेजी राज्य के कारण अीस देश में अेक बड़ी दुर्घटना यह हुअी की कुछ लोगों को अंग्रेजी तालीम, जीसे अूंची तालीम भी कहा जाता है, मीली और शेष को नहीं। फलतः वीद्वान और अवीद्वानों के दो वर्ग पड़ गये। जीन्हें वीद्या मीली, वह भी स्वदेशी नहीं थी, वीदेशी थी, फलतः भेद और संघर्ष बढ़ते ही गये।

दूसरी दुर्घटना यह हुअी की जीन्हें तालीम दी गयी, अुनका जीवनमान अूंचा बनाया गया, जो अीस देश की संस्कृति के वीरुद्ध था। यहां वीद्या और ज्ञान के साथ त्याग जोड़ा गया और माना गया की जीन्हें वीद्या प्राप्त नहीं है, वे अगर आनंद-भोग ले लेते है, तो अुसमें हरज नहीं, क्योंकी वे अज्ञान में है। पर ज्ञानी वैसा भोग ले, तो वह ठीक नहीं है। पर आज का वीद्वान तो वीद्यानंद नहीं, दूसरे ही आनंद के भोग में तृप्त होता है! वीद्या के साथ अूंचा जीवनमान, याने भोग और पैसा जोड़ा गया, यह वीद्या का अपमान है। परीणामस्वरूप वीद्या की नहीं, पैसे की वासना बढ़ी।

तीसरी दुर्घटना यह हुअी की वीद्या के साथ कर्मयोग नहीं जोड़ा गया। परीणामतः बीना काम कीये वीद्वान आनंद का भोग चाहता है और शरीर-श्रम को नीच मानता है। अीसका अर्थ है, अुत्पादन करने की तो अकल है नहीं, सीर्फ भोग लेने की ही अकल है!

तालीम के यो त्रीदोष वैसे ही भयानक है, जैसे आयुर्वेदानुसार कफ, वात, पीत्त का प्रकोप भी रोगों को समाप्त कर देता है। अैसी तालीम तो न देना ही बेहतर है। अराब भोजन करने से तो न करना ही अच्छा होता है। कुछ-न-कुछ खाना चाहीअे, अीसलीअे ज़हर तो नहीं खाया जा सकता!

शीक्षक का आधार होना चाहीअे—गांव के लोग, लड़के, अुनकी खुद की काम करने की शक्ती और आत्मवीश्वास। बच्चों का और समाज का शीक्षण, यह सब शीक्षा में शामील है। लोगों में पराक्रम की शक्ती नीर्माण करने का भी कार्य शीक्षकों पर आ जाता है। आज तो वह नौकर की हैसीयत से काम करता है, नेतृत्ववान की हैसीयत से नहीं; जब की हमारी सभ्यता का सीद्धांत है, देश का नेतृत्व शीक्षकों के हाथ में रहे। आज सरकार अुन्हें अपना नौकर बना कर अपने ढंग की पढ़ाअी और अपनी टेक्स्ट-पुस्तक सीखाने के लीअे कहती है! गनीमत है की यहां पंद्रह-बीस प्रतीशत ही लोग शीक्षीत है। अगर अस्सी-नब्बे प्रतीशत लोग अीसी शीक्षा से शीक्षीत होते, तो यहां गुलाम भी ज्यादा लोग होते! अीसलीअे शीक्षकों को स्वतंत्र बुद्धी रख कर गुलामी से अपने को मुक्त रखना चाहीअे और अगर अैसा नहीं हो सकता, तो अैसी सरकारी नौकरी भी अुन्हें छोड़ देनी चाहीअे।

तीरुमंगलम् (मदुरा), २६ और २८-१२

आम बराबर गेहूँ !

(टॉलस्टॉय)

नदी किनारे के एक गाँव के चन्द बच्चों को खेलते-खेलते देशी आम के बराबर एक चमकीली चीज़ मिली। एक मुसाफिर ने बच्चों के हाथ में वह चीज़ देखी। उसने बच्चों को दो-चार पैसे देकर उनसे वह चीज़ ले ली और वह चल पडा। उसने उसे रत्न बता कर राजा के हाथ बेच दिया और अच्छ रकम वसूल की।

एक दिन वह रत्न खिड़की पर रखा था कि इतने में मुर्गी ने उसमें चोंच मारी। तब यह मालूम हुआ कि यह तो गेहूँ है! राजा ने गेहूँ देख कर अपने पंडितों से पूछा कि ऐसा गेहूँ किस जमाने में होता था, अपनी पोथियाँ देख कर बताओ। पंडितों ने सब पोथियाँ देख डालीं, पर कहीं भी उसका उल्लेख नहीं मिला। गेहूँ की जानकारी के लिए राजा ने वृद्ध किसान को बुलाया। किसान को न तो आँख से दिखायी पड़ता था, न कान से सुनायी पड़ता था। उसके दाँत भी गिर गये थे। आवाज भी धीमी थी। दो लाठियों के सहारे वह आया। राजा ने किसान के हाथ में गेहूँ देकर पूछा। किसान ने उसे हाथ से टटोल कर कहा कि मैंने ऐसा गेहूँ न तो कभी उगाया और न कभी देखा। शायद मेरे पिताजी से इसके बारे में कुछ जानकारी मिले।

राजा ने उसके वृद्ध पिता को बुलाया। उसको आँखों से साधारण दीखता था और वह सुनता भी था। उसके कुछ दाँत भी ठीक थे। एक लाठी के सहारे वह आ पहुँचा। राजा ने गेहूँ दिखा कर "पूछा—ऐसा गेहूँ कभी तुमने उगाया है क्या?" किसान बोला—"ऐसा गेहूँ न तो मैंने उगाया और न देखा, पहले आज की अपेक्षा नाम मात्र बड़ा गेहूँ होता था। पुराने जमाने की काश्त की जानकारी अपने पिताजी से कभी-कभी सुनता था, इसलिए इस गेहूँ की जानकारी उनसे जरूर मिलेगी।" राजा ने उस महान् वृद्ध किसान को बुलाया। उसकी आँखें अच्छी थीं। वह ठीक सुनता था, उसके दाँत भी बहुत मजबूत थे। बिना लाठी के सहारे ही वह चल कर आ पहुँचा। राजा ने गेहूँ दिखा कर वृद्ध किसान से पूछा—"ऐसा गेहूँ कभी उगाया है क्या?" उसने हाथ में लेकर उसे परखा, बोला—"ओ हो! आज बड़ी मुद्दत के बाद ऐसा गेहूँ देखने को मिला।" उसने उसे थोड़ा कुतर कर चखा भी।

वृद्ध किसान बोला, "राजन्! मेरे जमाने में ऐसा गेहूँ सब जगह पैदा होता था, मेरी जवानी ऐसे ही नाज पर पली थी।" राजा ने पूछा, "यह दाना कहाँ से लाये थे या वह अपने आप उगा था? वृद्ध किसान मुस्कराया, बोला—"अनाज बेचना पाप था, हम सिक्के को जानते भी न थे, सबके पास अपना अनाज काफी रहता था।"

राजा ने पूछा—"आपकी खेती कहाँ थी और कैसी थी? ऐसा अनाज कहाँ बोते थे?" वृद्ध किसान ने उत्तर दिया—"खेत हमारे क्या, वे तो ईश्वर की ही धरती थी। जहाँ हमने जोता और मेहनत की; वही हमारा खेत हुआ। मालिक-मिलकियत की बात न थी। जमीन ऐसी तो कोई चीज नहीं थी कि जो 'मेरी'-'तेरी' होती। हमारे जमाने में हाथ की मेहनत ही ऐसी थी, जिसमें सब पाते थे।"

राजा ने किसान से दो प्रश्न पूछे—"(१) धरती पहले के जमाने में ऐसा अनाज कैसे देती थी? (२) आपका पोता दो लाठियों के सहारे चल कर यहाँ पहुँचा, लड़का एक लाठी के सहारे चल कर पहुँचा और आप बिना लाठी आ पहुँचे। आपकी आँखें निर्दोष हैं, दाँत मजबूत हैं और वाणी मधुर है, यह सब कैसे हुआ?" वृद्ध ने उत्तर दिया—"ऐसा इसलिए हुआ कि आदमियों ने आज अपनी मेहनत के भरोसे रहना छोड दिया। दूसरों की मेहनत का आसरा ले कर रहते हैं। पुराने जमाने में लोग ईश्वर के नियम पालते थे। उनका जो था, वही उनका था। दूसरों की मेहनत और उनके फल पर उन्हें लोभ नहीं होता था।"

व्यक्तिगत स्वामित्व पाप है

जमीन पर व्यक्तिगत स्वामित्व का अंत करके इस समस्या को हल करें और दूसरे लोगों के सामने न्यायपूर्ण, स्वतंत्र और सुखी जीवन का उदाहरण पेश करें।

जमीन पर व्यक्तिगत स्वामित्व कायम रखने में सहयोग देना और उसका समर्थन करना स्पष्ट पाप है, जिससे हर आदमी को बचना चाहिए। करोड़ों मनुष्य सूदखोरी, व्यभिचार, चोरी, हत्या आदि बातों को पाप-कर्म समझते हैं; वैसे ही जमीन पर व्यक्तिगत स्वामित्व भी पाप है। —टॉलस्टॉय

---

www.vinoba.in

सच्चे मूल्यों की कसौटी

[पिछले अंक का शेषांश]

(दादा धर्माधिकारी)

कृपालानीजी ने काँग्रेस से अलग होते समय एक बात कही थी कि हमारे गुरु गांधी ने कहा है कि अपने दुश्मनों से प्रेम करो ! मुझे आपसे प्रेम करना है और उसके लिए मुझे आपको दुश्मन बनाना है ! जब तक दुश्मन नहीं बनाया जायगा, प्रेम नहीं होगा ! मित्रों के साथ प्रेम करो, यह कहना गांधीजी भूल ही गये। कृपालानीजी सर्वोदय के अधिकारी प्रवक्ता हैं, गांधीजी के प्रमाणभूत हैं। उनकी बात में संकेत यह छिपा है कि पड़ोसी और दुश्मन, दोनों एक हैं। पड़ोसी चुना नहीं जाता, अनायास मिल जाता है। इसलिए मुझे अपने में पड़ोसीपन की भावना का विकास करना चाहिए। यह सामाजिक मूल्य है। दोस्त और दुश्मन पसन्द किये जा सकते हैं, पड़ोसी पसन्द नहीं किया जा सकता। पशु और मनुष्य में फ़रक़ यह है कि पशु में वैर-सम्बन्ध नैसर्गिक होता है; बिल्ली-चूहा, नेवला-साँप, बकरी-शेर। किन्तु मनुष्य में वह औपाधिक होता है। मनुष्य में राग-द्वेष जिस प्रकार स्वाभाविक हैं, उसी प्रकार प्रेम भी स्वायत्त है। दोस्त, दुश्मन सब हम स्वयं बनाते हैं। औपाधिक होने के कारण इस वैर-सम्बन्ध के लिए हेतु की आवश्यकता होती है, अतएव उसका निराकरण शक्य है। पशु का नैसर्गिक विरोध कारणरहित होता है, इसलिए उसका निराकरण शक्य नहीं। सर्कस वगैरा में जो होता है, वह बचपन की आदत के प्रताप से होता है—उसमें तीसरे की जरूरत रहती है। बिल्ली और तोते को एकसाथ पालने में आपकी ज़रूरत रहेगी, लेकिन मुझे या आपको एकसाथ पालने में किसकी ज़रूरत होगी? मनुष्य के जीवन में बुद्धि का स्थान प्रधान है। मार्गदर्शक पसंद करेंगे, तो हम स्वयं ही पसन्द करेंगे। मनुष्य स्वतंत्रता का अधिकारी है, इसलिए उसे बुद्धि की आवश्यकता है। मैं मानता हूँ कि आधार ऐसा नहीं होना चाहिए कि जिससे मेरा व्यक्तित्व ही समाप्त हो जाय।

यदृच्छा से पड़ोसी प्रस्तुत करने जितनी 'रिंगमास्टरी' भगवान् ने अपने ही हाथ में रखी है। उससे लाभ उठाने की बुद्धि सामाजिक बुद्धि है। इससे चारित्र्य का विकास होता है। चारित्र्य का विकास कभी एकान्त में नहीं हो सकता। हिमालय में तो प्राचीन काल में लोग रहते ही थे। यदि वहाँ आनन्द होता, तो गाँव क्यों बसाये जाते? एकान्त में मनुष्य की शक्ति का विकास होता है, चारित्र्य का नहीं। चारित्र्य के विकास का आरम्भ तो सहजीवन से होता है। सहजीवन सामाजिकता का श्रीगणेश है और चारित्र्य की परिसमाप्ति सहजीवन की स्वाभाविकता है। दूसरों के साथ उनके जीवन को सम्पन्न करने के लिए रहना, उसके जीवन को मदद पहुँचाने के लिए रहना, पड़ोसीपन है। मिलन की उत्सुकता उत्पन्न की जा सके, तो संघर्षविहीन सम्पर्क सिद्ध हो। संघर्ष यदि जीवनदायी है, तो वह संघर्ष नहीं रहता। जहाँ हारने का डर नहीं रहता, वहाँ जीत में कोई मज़ा नहीं होता। जहाँ जान जाने का डर नहीं, वहाँ वीर-वृत्ति नहीं आती। युद्ध में वीरता नहीं, इसीलिए उसका कोई सांस्कृतिक मूल्य नहीं और यही कारण है कि सब उसका निषेध करते हैं। जहाँ दूसरों के प्राण लेने की सुलभता होती है वहाँ क्रूरता है, वीरता नहीं। जिस संघर्ष का परिणाम कल्याणकारी होता है, वह संघर्ष न रह कर सहयोग बन जाता है।

दूसरे को अपने जीवन में समाना, दूरवालों का पास होना, बिरानों को अपना करना, दुश्मन को पड़ोसी बनाना, इसीका नाम चारित्र्य है। इसमें संघर्ष नहीं, सहयोग है। जहाँ दोनों पक्ष सम्मिलित होते हैं, वह सहयोग है—उसमें सामाजिक मूल्य है। जहाँ दोनों सम्मिलित नहीं, वहाँ सामाजिक मूल्य नहीं। दूसरे, जहाँ दोनों की जीत है वहाँ सामाजिक मूल्य है; जहाँ दोनों की जीत नहीं, वहाँ सामाजिक मूल्य नहीं। खेल में हार-जीत का महत्त्व नहीं; खेल खेल के लिए है, हार-जीत गौण है। सामाजिक मूल्य उभय-कल्याणकारी होते हैं। तीसरे, जिसे रखना चाहते हैं, वह स्वभाव है—मूल्य है, जिसे मिटा देना चाहते हैं, वह मूल्य नहीं। मुझे गुस्सा आया। मैं उसे मिटा देना चाहता हूँ, इसलिए वह विकार है; मूल्य नहीं। दूसरे से प्रेम है, उसे रखना चाहता हूँ, इसलिए वह स्वभाव है। जिसे रखना है, वह गुण है; दूर करना है, वह दोष। चोरी वहीं तक, जहाँ तक वह पूरी न हो। मैं घड़ी चुराना चाहता हूँ, उसे चुरा लेता हूँ और फिर चाहता हूँ कि अब यह घड़ी चोरी न जाय, अब कोई चोर न रहे। जो सब पर लागू न हो, वह मूल्य नहीं। दुर्गुण सब पर लागू नहीं होते।

सारांश :–(१) जिसमें हार-जीत नहीं वह मूल्य, (२) जिसे रखना है वह मूल्य। हटाना है वह नहीं। (३) सब पर लागू हो वह मूल्य। (४) जो अपने नाम पर चले, वह मूल्य। दूसरे के नाम पर चले, वह नहीं। उदाहरण के लिए, मेरे पास एक नक़ली रुपया है; बाजार में जाकर मिठाईवाले से कहता हूँ कि भाई यह नक़ली रुपया है, इसकी मिठाई दो। तो वह कहेगा–आपका नाम क्या है? मैं कहूँगा–दादा धर्माधिकारी। इस पर वह कहेगा, अरे, वह तो बुद्धिमान आदमी है। मैं घर आता हूँ। मेरा मित्र कहता है, लो ये नौ रुपये खरे हैं, इनके बीच इस खोटे रुपये को रख दो। यों नौ खरों के साथ एक खोटा भी चल जायगा। इस प्रकार जो अपने नाम से नहीं चलता, बल्कि दूसरे के नाम से चलता है, वह मूल्य नहीं। असत्य अपने नाम से नहीं चलता, चलने के लिए उसे सत्य का जामा पहनना पड़ेगा। हिंसा अपने नाम से नहीं चलेगी, वह अहिंसा के नाम से चलेगी। (५) जिसके लिए कारण की ज़रूरत होती है वह मूल्य नहीं, जिसका कारण स्वयं मैं ही हूँ, वह मूल्य है। उदाहरण के लिए, मान लीजिये कि यात्रा में मेरे साथ साढ़े बारह बरस की मेरी एक बेटी है। रेलगाड़ी में टिकट-चेकर बिटिया से पूछता है, कितने साल की हो? वह कहती है, साढ़े बारह की। मैं झगड़ा करता हूँ; यह क्या जाने कि इसका जन्म कब हुआ था? और आधा टिकट मान्य करवा लेता हूँ। बिटिया के लिए कोई कारण न था कि वह झूठ बोले। जिसे निमित्त, कारण की आवश्यकता न हो वह गुण। जिसके लिए क़ैफ़ियत–बचाव–देना पड़े, वह मूल्य नहीं। किसीको तमाचा मारूँ, तो क्यों मारा, यह बताना जरूरी होगा, लेकिन प्रेम करूँ, तो कैफियत की ज़रूरत नहीं होगी। द्वेष के लिए क़ैफियत चाहिए, दोस्ती के लिए नहीं। दुश्मनी के लिए क़ैफ़ियत देनी होगी, सुलह के लिए नहीं। जिसका बचाव न करना पड़े, वह निरपेक्ष मूल्य है।

जीवन-मूल्यों की कसौटियाँ

इस तरह मूल्य की कसौटियाँ ये मानी जायेंगी : १. शाश्वत, २. वास्तविक, असली, ३. सार्वत्रिक, ४. उभय कल्याणकारी–भद्र और ५. निरपेक्ष। मूल्य के ये पाँच लक्षण हैं।

मनुष्य की प्रतिष्ठा बुद्धि में है। मनुष्य के आचरण का परिणाम उसकी बुद्धि पर और बुद्धि का परिणाम आचरण पर होता है। बुद्धियुक्त आचरण का अर्थ है, शुद्ध आचरण और शुद्ध आचरण का अर्थ है, दूसरों के लिए अपने जीवन का उत्सर्ग। इस उत्सर्ग से चारित्र्य का आरम्भ होता है।

(गुजराती 'कोडियुं' से साभार) (अनुवादक–काशिनाथ त्रिवेदी)

"मामेकं शरणं व्रज !"

(नेमिशरण मित्तल)

यह कसौटी का वर्ष है। १९५७के लिए विनोबाजी की प्रेरणा पर सर्व सेवा-संघ ने भूदान-यज्ञ-आरोहण को हरि-आश्रित करने का पावन निश्चय किया है। भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा :

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥

(गी० १२—६,७)

आज भूदान-यज्ञ हमसे एक वर्ष के लिए सम्पूर्ण समर्पण और योग-युक्त चिन्तन की माँग कर रहा है और इसके बदले में वह हमें साम्ययोग की क्रांति के वरदान का आश्वासन दे रहा है। यह है १९५७ का आवाहन।

'अनन्येनैव योगेन'

भूदान-यज्ञ के साथ हमारा यह योग-संयोग अनन्य हो, अब यही युगधर्म है। हमें अपनी समस्त निष्ठाओं, धारणाओं, आस्थाओं और शंकाओं का परित्याग करके अनन्य भाव से इस आरोहण का अनुगमन करना है, यही संकल्प हम अपने हृदयों में जाग्रत करें, तभी १९५७ का दिव्य संकल्प सुफल हो सकेगा। भूदान-यज्ञ में लगे हुए हम कार्यकर्ता श्रीकृष्ण भगवान् के इस वचन का मनन करें, तो हमें अपनी भक्ति का स्वरूप स्थिर करने में मदद मिलेगी।

www.vinoba.in

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥
(गी० १८—६५)

हम निरन्तर सर्वोदय-समाज की स्थापना के लिए भूदान-यज्ञ-आरोहण में अपने चित्त को स्थिर रखें, उसकी भक्ति करें, उसीके निमित्त हमारा जीवन-यज्ञ अर्थात् भोजनाच्छादन, शयन, पठन, मनन, भ्रमण सब कुछ चले, उसीमें हमारी श्रद्धा प्रतिष्ठित हो, तभी हम उसे प्राप्त कर सकेंगे। यह क्षण हमारी निष्ठा की कसौटी का है। विनोबाजी ने स्पष्ट पुकार की है—'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।' हमें अपने समस्त विविध धर्मों अर्थात् कर्मों, कृत्यों और कर्तव्यों एवं निष्ठाओं का परित्याग करके भूदान-यज्ञ में अपनी समूची शक्ति का प्रयोग करना है। चारों ओर से अपनी संघर्षशील निष्ठाओं को बटोर कर भूदान-यज्ञ में प्रस्थापित कर देने से ही हम सर्वोदय-विचार की सबसे बड़ी सेवा कर सकेंगे, निधि का छेदन करके सचमुच हम इस जगत् की परम्-महिमामयी संजीवनी शक्ति के आश्रित हुए हैं, वह निश्चय ही हमारे योग-क्षेम का सम्यक् वहन करेगी। भक्त के लिए यह आत्म-समर्पण अथवा बिना शर्त समर्पण की दिव्यानुभूति है। इसमें हमारी परख होगी और हम तपेंगे। हमारे भीतर तपःपूत तेजस्विता का उदय होगा और हम अधिक नम्रतापूर्वक इस महान् क्रांति के उपयुक्त वाहन बनेंगे। दरिद्रनारायण के साथ हमारी सहानुभूति सहजीवन में रूपान्तरित और क्रियान्वित करने की यह पुण्यवेला हमारे सामने आकर उपस्थित हुई है। हम उठें और इस पुनीत पर्व में अपने लिए दृढ़-प्रतिज्ञ हों।

भगवान् राम ने भी भक्ति का यही स्वरूप बताया है। उन्होंने विभीषण को उपदेश दिया है—"सबके ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि डोरी॥ अपने समस्त ममत्व-रूपी धागों को बटोर कर और उनकी डोर बना कर उससे जो अपने मन को मेरे चरणों से बाँध देता है, ऐसा सज्जन मेरे हृदय में (लोभी के मन में धन की भाँति) बसता है।" वित्तच्छेद की क्रिया द्वारा हमने समर्पण का जो कदम उठाया है, उसके साथ ही साथ हमें अपनी अनेकमुखी ममता का केन्द्रीयकरण करके अपनी सारी शक्ति भूदान-यज्ञ-आरोहण पर केंद्रित करनी है। पुरी-सम्मेलन का आवाहन वापिस नहीं लिया गया है। आज विविध रचनात्मक प्रवृत्तियों में जो सेवक निष्ठा से साधना कर रहे हैं, उन सबको मनोयोगपूर्वक एक वर्ष के लिए यह तपस्या करने का निमंत्रण है।

देश की राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए हमने अनेक बार आगा-पीछा सोचे बिना घर-बार की व्यवस्था किये बिना गांधीजी की जेल सहर्ष और उत्साहपूर्वक स्वीकार की। वैयक्तिक रूप से ही नहीं, संस्थागत रूप से भी हमारी रचनात्मक संस्थाओं ने बलिदान किया। खादी और ग्रामोद्योग की संस्थाओं में ताले पड़े, कार्यकर्ता बन्दी बने और राजनीतिक आज़ादी प्राप्त हुई। आज देश की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक पुनर्रचना का सत्याग्रह छिड़ा हुआ है। पाँच वर्षों से हमारा अजेय सेनापति रण-संग्राम के क्षेत्र में अडिग डटा है। १९५७ के लिए उसने नयी दुन्दुभि दी है, हमने सब सेवकों का आवाहन किया है। ये क्षण हमारी कसौटी के क्षण हैं। एक वर्ष के लिए गांधी-विनोबा की जेल सोच-समझ कर कबूल करने वाले भाई-बहनों को आवाहन है। विनोबा की यह पुकार राष्ट्र के सत्त्व को जाग्रत करने में सुफल होगी, ऐसा हमारा विश्वास है। १९५७ को सर्वोदय-सत्याग्रह का वर्ष माना जाय। सत्याग्रह का स्वरूप सौम्यतर है, इसीलिए वह सूक्ष्मतर भी है। हम उसे पहिचानें और निश्चिन्तता की खोज किये बिना इस यज्ञ में समर्पण के लिए आगे बढ़ें, तभी यह क्रान्ति यशस्वी होगी।

---

* निधि-मुक्ति से 'ईश्वर-सन्निधि' और तंत्रमुक्ति से 'मन्त्र-सिद्धि' साधनी है। "तुका म्हणे जे जे भेटे ते ते वाटे मी ऐसे"—अनुभूति ऐसी चाहिए कि जो भी मिला, मेरा ही रूप! हम अपने साथ जिस तरह पूर्ण निस्संकोच रहते हैं और पूर्ण क्षमाशील होते हैं, जनता के साथ व्यवहार करते समय वैसे ही पूर्ण निस्संकोच और पूर्ण क्षमाशील रहना है।

× × ×

* मुहम्मद पैगंबर ने कहा था कि तुम अच्छा काम कर भी लोगे, मरने के बाद ईश्वर की हाजिरी में चले भी जाओगे और ईश्वर को अपने सामने देख भी लोगे; फिर भी तुम्हारी शंका नहीं जायेगी और पूछोगे, क्या सचमुच ईश्वर है? क्या ईश्वर के दर्शन मुझे हो सकते हैं? पर तुम्हारे हृदय पर एक मुहर, एक सील लगी है, उसीसे यह शंका होती है। उसे हटा भर दो।

—विनोबा

ग्रामदानियों के बीच विनोबाजी

विनोबाजी : आपने क्या समझ कर ग्रामदान दिया भाई?

ग्रामदानी गाँवों के प्रतिनिधियों में से एक : हमारे गाँव में जो गरीब हैं, उन्हें पूरा खाना नहीं मिलता है। हमने सोचा कि हमारे पास जो कुछ है, सभी बाँट कर खायेंगे। अब ग्रामदान के जरिये उसीका मौका मिला।

विनोबाजी : ग्रामदान तो बुनियाद है। अब उस पर ग्रामराज्य का मकान बनाना है। क्या तुमने अपना कपड़ा, तेल आदि चीजें गाँव में ही बनाने का सोचा है?

दूसरा प्रतिनिधि : हाँ, सोचा है। हम वैसा करने वाले हैं।

विनोबाजी : बहुत अच्छा। एक बात हमेशा याद रखो कि अब गाँव में मालकियत किसी की नहीं रही है। भगवान् की हो गयी है।

पहला प्रतिनिधि : अब हम गाँव की जमीन का बँटवारा किस तरह करें?

विनोबाजी : जिस तरह से गाँववाले मिल कर सोचेंगे, वैसा होगा। छोटा गाँव होगा, तो गाँव का एक खेत भी बन सकता है। 'वयलूर' गाँव के जैसे चार खेत भी बन सकते हैं, हर घर को काश्त करने के लिए थोड़ी-थोड़ी जमीन बाँटी भी जा सकती है। आप चाहे जैसा प्रयोग कीजिये।

दूसरा प्रतिनिधि : हमारे सामने कर्जे का बड़ा सवाल है।

विनोबाजी : जो कर्जा होगा, वह व्यक्तिगत नहीं रहेगा, गाँव का होगा। अब तक जो कर्जा लिया था, उसके बारे में साहूकारों से बात करेंगे कि 'भाई, आज तक तुम्हें ब्याज के रूप में कितना मिला, वह देखो और बचे हुए में तुम अगर संपत्तिदान के तौर पर कुछ छोड़ सकते हो, तो अच्छा है।' आपने ग्रामदान देकर प्रेम प्रकट किया है, तो साहूकारों से प्रेम से बात करने पर वे भी कुछ छोड़ने के लिए तैयार होंगे। फिर बाकी जो बचा रहेगा, उसके बारे में उनसे बात करके हर साल फसल के हिस्से के रूप में दिया जायेगा। फिर कुछ थोड़ी मदद बाहर के संपत्तिदान से और सरकार से भी हासिल कर सकते हैं। लेकिन आगे कभी कर्जे की जरूरत पड़ी, तो सारे गाँव की तरफ से लिया जायेगा, व्यक्तिगत नहीं।

पहला प्रतिनिधि : लड़के-लड़कियों की शादी की भी चिंता होती है।

विनोबाजी : इसके आगे शादी तो सारे गाँव की तरफ से होगी और दूसरे गाँवों के लोग अपनी लड़कियाँ आपके गाँव में भेजने के लिए उत्सुक भी होंगे, क्योंकि वे सोचेंगे कि इस गाँव में छोटा घर नहीं रहा है, बड़ा परिवार बना है। अब हमारी लड़की को किसी चीज की कमी नहीं रहेगी। बड़ा परिवार बनने से आप श्रीमान् बन गये। आज थोड़े ही गाँवों में ग्रामदान हुआ है, इसलिए ये सवाल उठते हैं। लेकिन जब पाँच लाख गाँवों में ग्रामदान होगा, तो कर्जे या शादी का सवाल ही नहीं बचेगा। तब साहूकारों का भी हृदय परिवर्तन हो जायेगा और कुल कर्जा वे छोड़ देंगे, क्योंकि जहाँ मालकियत ही नहीं रही, कर्जा कहाँ से रहेगा आज थोड़े ग्रामदान हुए और बाकी अंधकार है, इसलिए सवाल है। परंतु सूर्योदय होने के बाद अंधकार का क्या होगा, यह सवाल ही नहीं रहेगा।

दूसरा प्रतिनिधि : ग्रामदान के बाद पड़ोस के गाँव के कुछ भाई हमारी फसल चुराने आये थे।

विनोबाजी : फिर आपने क्या किया?

प्रतिनिधि : हमारे यहाँ ग्रामदान हुआ, इसलिए हमने उन पर कोर्ट में नालिश नहीं की। उन्हें पकड़ कर उनसे वह अनाज छीन कर उन्हें छोड़ दिया।

विनोबाजी : ठीक किया। अब आप अलग-अलग नहीं रहे हैं, एक हुए हैं, इसलिए चोरों के आने का संभव ज्यादा है या कम?

सब लोग : कम है।

विनोबाजी : लेकिन इसके पहले यह करो कि आपके गाँव में रात को डाका डालने के लिए कोई मनुष्य यदि आया, तो उसे पकड़ कर कहो कि 'भाई तू गरीब दीखता है, इसीलिए चोरी करने आया है। पर इसके आगे तुझे किसी चीज की जरूरत होगी, तो रात में आने की जरूरत नहीं है, दिन में आओ, हम तुझे काम भी देंगे और अनाज भी देंगे।

पहला प्रतिनिधि : हम ऐसा करेंगे, तो दूसरे गाँवों से कई लोग हमारे गाँव में आयेंगे।

विनोबाजी : आने दो। फिर आप उनको साथ लेकर उनके गाँव के जमीन-वालों के पास जाइये और उन्हें प्रेम से समझाइये कि 'भाई आपके गाँव के दुःखी लोग हमारे गाँव में आते हैं, तो आप भी ग्रामदान क्यों नहीं कर डालते? उन्हें

www.vinoba.in

जमीन क्यों नहीं देते ?' इससे ग्रामदान का खूब प्रचार होगा। आप क्या समझते हैं कि भगवान् ने आपको ही अक्ल दी है, उन्हें नहीं दी! तो वे फिर भी ग्रामदान क्यों नहीं करेंगे ?

यह सुन कर सब लोग हँसने लगे। फिर एक भाई ने पूछा : हमारे गाँव में दो-तीन भाई, जो बाहर रहते हैं, ग्रामदान के लिए तैयार नहीं हैं, तो उनका क्या करें ?

विनोबाजी : उन पर खूब प्रेम करो। उनके पास जाकर कहो कि 'आप अलग रहना चाहते हैं, तो कोई हर्ज नहीं। हम आपकी पूरी रक्षा करेंगे। हमारी बाकी की जमीन हम आपस में बाँट लेंगे। आप जब अपने खेत में काम करने के लिए बुला लेंगे, तो हम आयेंगे और पूरे प्रेम से काम करेंगे।' आज जो मजदूर उनके खेतों में काम करते हैं, वे दिल लगा कर काम नहीं करते। फिर वह जमीनवाला भाई सोचेगा कि जब से ग्रामदान हुआ है, तब से उसके खेतों की फसल बढ़ी ही है, तथा लोग प्रामाणिक और प्रेमी बन गये हैं। प्रेम से मेरा काम करते हैं। तो मैं भी उनमें शामिल क्यों न हो जाऊँ ? जो प्रेम आपने अपने गाँव के भूमिहीनों पर किया वही प्रेम जमीन न देने वाले भाइयों पर करना है। तब वे भी जीते जायेंगे। समझने की बात यह है कि वे भी जानते हैं कि अगर गाँव वाले बहिष्कार करते, तो उसके खेतों में काम करने के लिए कौन आता। उसके बदले में उलटे आप उन पर प्रेम करते हैं, उनका काम कर देते हैं, तो वे समझेंगे कि अब उनके भले में हमारा भी भला है।

अंत में विनोबाजी ने उन्हें आशीर्वचन कहे : आपने ग्रामदान से जो प्रेम प्रकट किया, उसे सतत बढ़ाओ। जब दूसरे गाँववाले देखेंगे कि आपके गाँव के लोग मिलजुल कर काम करते हैं, नीतिमान बने हैं, तो फिर वे भी आपके पीछे आयेंगे। अभी हमें कोरापुट के एक कार्यकर्ता का पत्र आया है कि वहाँ के गाँव-गाँव के लोग खुश होकर हमारे भूदान-कार्यालय में आकर ग्रामदान देते हैं। अच्छाई की छूत वेग से फैलती है। इसलिए रोज शाम को भगवान् का भजन करो, तो वह आपको सद्बुद्धि देगा। आपको उसीने बुद्धि दी, इसीलिए आपने यह अच्छा काम किया। उसके पास बहुत धन पड़ा है, वह कुल आपका ही है। उसके पास अधिकाधिक माँगते जाओ, तो वह देता ही जायेगा। फिर उससे आपके गाँवों की ताकत बढ़ेगी। आज ग्रामदान के कारण सारे तमिलनाड की हवा बदल गयी है और लोगों की हिम्मत बढ़ी है। यह ध्यान में रखो कि जहाँ देने की हवा शुरू हुई, वहाँ दारिद्र मिट गया !"

—निर्मला देशपांडे

शंकर की भूमि पर–

(माम्मन, केरल)

"जब ग्रामदान सफल होगा, तब सर्वत्र अभेद की स्थापना होगी। व्यास, कृष्ण, अर्जुन, संजय; छोटे-बड़े सब आपस में अभेद का अनुभव करेंगे और साम्ययोग का संदेश सिद्ध होगा ···।" संत-वाणी की प्रतिध्वनि शिष्य के शब्दों में गूज उठी। भक्ति का स्रोत फूट कर संध्यादेवी की सुंदर नीरवता में विलीन हो गया। सैंकड़ों दिल भर आये।

विनोबाजी के मंत्री श्री दामोदरदास मूँदड़ा ने १० नवंबर से १५ नवंबर तक, ६ दिन की केरल-यात्रा की। 'विनोबा-निकेतन' के वार्षिक समारोह और केरल का ग्रामदान में मिला हुआ पहला गाँव-'तंचनकोड'-के समूह-जीवन के समारंभ के हेतु वे केरल आये थे, पर कार्यकर्ताओं के आग्रह से वे केरल के हर जिले में घूमे और सब कार्यकर्ताओं से मिले।

'विनोबा-निकेतन' केरल के त्रिवेन्द्रम जिले के मलयडी गाँव में एक भू-दान कार्यकर्ताओं का आश्रम है। १९५४ में केरल के प्रमुख भूदान-कार्यकर्ताओं की बैठक में तय किया गया कि त्रिवेन्द्रम जिले में, जहाँ उस वक्त दाताओं की संख्या केरल की कुल दाता-संख्या की दो-तिहाई थी, एक भूदान सघन-क्षेत्र चुना जाय और संपूर्ण ग्रामदान की कोशिश की जाय। जिले के नेडुमंगाड तालुके में २० हजार की आबादी का एक क्षेत्र, जिसमें १८ करा या गाँव (केरल में गाँव अलग-अलग नहीं हैं।) चुने गये और काम शुरू हुआ। जिले के कार्यकर्ताओं को एक भूदान-मूलक ग्रामोद्योग-आश्रम की जरूरत महसूस हुई और उसके फलस्वरूप 'विनोबा-निकेतन' खड़ा हुआ। कार्यकर्ताओं ने अपने श्रम से आश्रम का मकान बनाया था।

निकेतन के वार्षिक समारोह में गाँव के सर्वोदय-जीवन के समारंभ पर विनोबाजी की ओर से श्री दामोदरदासजी बोल रहे थे। गीता के १८ अध्यायों से १८ गाँवों की तुलना करते हुए विनोबा-निकेतन को उन्होंने गीता-माता ही बना दिया! "मोह-निरसन से काम शुरू हुआ है। ११ गाँव मिल जायेंगे, तो ग्रामदान का विश्वरूप-दर्शन होगा। १२ मिलेंगे, तब भक्ति का दर्शन और १६ में दैवी संपत्ति की विजय स्थापित होगी। १८ गाँव मिल जाने पर तो सर्वत्र अभेद की ही स्थापना होगी।" श्रद्धा से भरा एक-एक शब्द श्रोता के रोम-रोम को उद्वेलित कर रहा था। सभा समाप्त हुई, देहाती अपने घर जा रहे थे। एक भाई अपने साथी से कहता जा रहा था, "प्रत्येक शब्द हृदय के अंतरपट तक प्रवेश कर ही लेता है।" यह कोरी प्रशंसा नहीं थी, सरल ग्राम-हृदय की अनुभूति थी।

तंचनकोड में ३१ भूमिहीन परीवारों को जमीन बाँटी गयी।

कोट्टारम 'विनोबा-निकेतन' से ७० मील पर है। सर्व-सेवा-संघ के नागरकोविल विभाग के कार्यकर्ता और करीब २० ग्रामोदय-समितियों के कार्यकर्ताओं की बैठक वहाँ हुई। अन्य भूदान-कार्यकर्ता भी आये हुए थे। यह स्थान अब तक केरल में ही था, पर अब तमिलनाड में जोड़ा गया है। जिज्ञासु कार्यकर्ताओं की शंका-निवृत्ति करते हुए भूदान की क्रांति के प्रत्यक्ष कार्यक्रम के बारे में करीब एक घंटा दामोदरदासजी बोले। क्रांति की लहरें कार्यकर्ताओं के पुरुषार्थ पर हिलोरें लेने लगीं। दुपहर को वेल्लायनी में आम सभा हुई। गाँव वालों के दिलों में सर्वस्व-समर्पण की बुद्धि जाग्रत जग गयी।

त्रिवेन्द्रम में प्रोफेसर, लेक्चरर, वकील, भूतपूर्व मंत्री, पत्रकार, साहित्यकार, समाज-सेवक, ऐसे मुख्य कार्यकर्ता इकट्ठे हुए थे। काफी गम्भीर चर्चा चली। बाबा केरल आ रहे हैं, यह संदेश उनके अग्रदूत के मुँह से सुन कर लोग हर्षित हुए और अखबारों ने भी भूदान के इस स्पष्ट विवेचन को खूब सराहा। गांधी-विचार-परिषद् की त्रिवेन्द्रम शाखा का एक ग्रंथालय का उद्घाटन भी उन्होंने किया।

कोल्लम् (कोयिलॉन) जिले में ता० १२ को उन्होंने प्रवेश किया। सुबह अडूर गाँव में कार्यकर्ता-सभा में करीब १०० भाई, जो अब तक भूमिहीन रहे थे और जिन्हें अब भूदान में भूमि मिली है, इकट्ठे हुए थे। ९० सेन्ट भूमि जिन्हें मिली उस भाई से उन्होंने पूछा,–"आपको मिली जमीन में से भी थोड़ा हिस्सा पड़ोस के एक परिवार को देने को क्या आप तैयार हैं ?" "जरूर !" बिना संकोच के तुरंत जवाब मिला। क्रांति का दर्शन ही हमें हुआ।

१३ की सुबह कोट्टयम जिले के मूवाट्टुपुजा गाँव में सर्व-सेवा-संघ के एक खादी-वस्त्रालय के उद्घाटन पर खादी की क्रांति का संदेश सुना कर शंकराचार्य के गाँव कालडी का दर्शन करते हुए वे त्रिचुर पहुँचे। शंकर की कहानी गाती हुई बहती 'पेरियार' के तीर्थ-स्पर्श से शंकर-भक्त को रोमांच हो आया। शंकर का मंदिर, शारदा-मंदिर व माता की समाधि से तो किसी भी भक्त का दिल भर आयगा; फिर भावुक भक्त दास का क्या कहना ? कालडी की हवा में, नदी के बूँद-बूँद में, जमीन के कण-कण में तृण के तिनके में भी शंकर का दर्शन कर रहे थे कि साथी ने उनसे कहा : "शंकर की कालडी सर्वोदय-सम्मेलन की राह देखती खड़ी है।" दामोदरदासजी ने जवाब दिया : "नदी, विस्तृत खेत और यह सारा वातावरण सम्मेलन के लिए योग्य जगह है, यही बता रहा है।"

त्रिचूर जिले में अखिल केरल अखंड पदयात्री-दल से रास्ते में मिलते हुए वे पालघाट पहुँचे। दक्षिण मलबार के काफी कार्यकर्ता आये थे। जोरदार चर्चाएँ चलीं। आखिर सम्मेलन केरल में हो, यह प्रस्ताव आग्रहपूर्वक लोगों ने पेश किया। उस रात १०२ डिग्री बुखार में दामोदरदासजी बिस्तरे पर गये। तब पता चला कि आज का कार्यक्रम सारा बुखार में ही हुआ था। सुबह एक एनिमा और उपवास हुआ और कार्यक्रम चालू रहा। पालघाट में बहनों के बेसिक ट्रेनिंग कॉलेज और भाइयों के सरकारी कॉलेज में उन्होंने बताया कि शिक्षण में क्रांति लाने के काम में विद्यार्थी कैसे हाथ बँटा सकते हैं।

पेरूर-गांधी-सेवा-सदन का काम, कला-विभाग आदि का दासजी पर बड़ा प्रभाव पड़ा। कालिकट में उत्तर मलबार के कार्यकर्ताओं की सभा में भी उन्होंने क्रांति का संदेश सुनाया।

केरल के छोटे-छोटे कार्यकर्ताओं से, जिनका कि नाम भी कोई नहीं जानता, व्यक्तिगत तौर पर मिलने, स्थिति समझने, सलाह देने आदि का कष्ट उन्होंने उठाया। केरल के कार्यकर्ता इसके लिए उनके अतीव कृतज्ञ हैं। केरल फिर से आँखें मल कर जागने लगा है। कार्यकर्ताओं में तेज और आत्म-विश्वास का बोधोदय हुआ है। जगह-जगह आवाज उठती है : "बाबा आ रहे हैं", "बाबा आ रहे हैं, "फिर से वामन आ रहे हैं !"

www.vinoba.in

खेती के मेरे कुछ विशेष अनुभव

(गोविंद रेड्डी)

[श्री गोविन्द रेड्डी दक्षिण के साधारण किसान-घर के युवक हैं। १९४२ की जेल-यात्रा के बाद सीधे गांधीजी के पास सेवाग्राम आकर आश्रम में रहने की इजाजत उन्होंने प्राप्त कर ली। वहाँ जो भी काम उन्हें सौंपा जाता, उसे वे पूरी लगन और गहराई से करते एवं उसमें से ही अपनी ज्ञान-वृद्धि करते। गांधीजी के बाद जब आश्रम ने पू० विनोबाजी के मार्गदर्शन में कांचन-मुक्ति का निश्चय किया, तब उस काम को सफल करने का मुख्य आधार श्री रेड्डीजी ही बने। फिर आश्रम ने जब भूदान-आंदोलन में पूरी तरह लग जाने का तय किया, तब वे भी अपनी टोली बना कर मध्यप्रदेश में पदयात्रा करते रहे। आजकल श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे के मार्गदर्शन में कोरापुट (उड़ीसा) में ग्रामोदय-कार्य में घने जंगल में गरंडा केंद्र में निर्माण-कार्य में लगे हैं। श्री रेड्डीजी नित्य स्वाध्याय को भी उतना ही महत्व देते हैं, जितना शरीर-श्रम का आग्रह वे अपने जीवन में रखते हैं। —सं०]

इसी अंक में अन्यत्र टॉलस्टॉय की एक कहानी है—'आम बराबर गेहूँ' के नाम से। उसके प्रकाश में ही मैं अपने इन १५-२० सालों के कुछ अनुभव भी यहाँ प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

(१) सन् १९३९ से अक्टूबर '४२ तक मैं मजदूर-वर्ग में था। ३-४ साल तक ५००० एकड़ क्षेत्र के ५ गाँवों में हमारी टोली खेती में मजदूरी करती थी, जिसमें ज्यादातर खेतों में बांध डालने का काम रहता था। इससे पता लगा कि अच्छे दर्जे की सैंकड़ों एकड़ ज़मीन एक ही जगह पर एक-एक किसान के पास थी। उनकी सारी खेती मजदूरों के बल पर चलती थी। तीसरे दर्जे की नाममात्र जमीन गरीब जनता के पास थी।

सन् १९४६ से १८ अप्रैल '५५ तक कृषि के निमित्त आसाम छोड़ कर मैं बाकी सब प्रान्तों में घूमा। इस बीच मैंने ३० बड़े-बड़े सरकारी और करीब २०० गैरसरकारी फॉर्म देखे। छोटे-बड़े सैंकड़ों किसानों से मिला। उनसे कई प्रकार की बातें भी हुईं, जिनसे मालूम हुआ कि सारी अच्छी जमीन बड़ों के पास है। आज की जमीन की चकबन्दी से जमीन को इतनी क्षति पहुँची है कि हजारों साल मेहनत करेंगे, फिर भी यह क्षति-पूर्ति सम्भव नहीं।

बड़ी खेती और चकबन्दी

कई सालों से खेती की डायरी मैं रखता हूँ। उससे मालूम होता है कि एक एकड़ काश्त करने के लिए साल भर में ३००० घंटे काम करना पड़ता है। अब तक कई प्रयोग किये, निरीक्षण किया और देखा कि जमीन के अन्दर इतनी प्रचंड शक्ति है कि फी एकड ३०० मन अनाज मिल सकता है। परंतु मौजूदा चकबन्दी बदले बिना ऐसा अशक्य है। साथ-साथ काश्त की १८ प्रक्रियाएँ भी समझनी होंगी। तब आम बराबर गेहूँ, याने ३०० मन अनाज हो सकता है।

कई दफा सुनने में आता है कि छोटी खेती आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं है, उसमें मनुष्य-शक्ति अधिक खर्च होती है; इसलिए बड़ी खेती अपनानी होगी, तभी आर्थिक स्थिति मजबूत होगी। पर हजारों साल का अनुभव देखा जाय, तो पता चलेगा कि बड़ी खेती लाभदायक नहीं हो सकती।

राजा का पहला प्रश्न था : "ऐसा गेहूँ देने वाली जमीन कहाँ थी और कैसी थी, अब पहले की तरह अनाज क्यों नहीं पैदा होता ?" इसके न होने का कारण है, बड़ी खेती और आज की चकबन्दी। जमीन कैसे बरबाद होती है, यह नीचे के आँकड़ों से मालूम होता है। लगातार ४-५ इंच वर्षा हो, तो एक एकड़ में से २०६० मन मिट्टी बह सकती है, जिसमें नाइट्रोजन २५० सेर होगी, जिसका मूल्य होगा १६५० रुपये, २१९२½ सेर पोटाश होगा, जिसका मूल्य होगा २१९२½ रुपये और ७२½ सेर फास्फोरस होगा, जिसका मूल्य होगा ७२½ रुपये, अर्थात् कुल ३९१५ रुपये की हानि हो सकती है। इतनी क्षति १८ महीनों के भीतर जुताई और प्रक्रियाओं के जरिये पूरी हो सकती है। मगर वर्षा एक ही दिन नहीं होती। नित्य निरंतर वर्षा होने वाली है और जमीन की क्षति भी चालू रहने वाली है। इस क्षति को रोकना हो, तो चकबन्दी तोड़ कर छोटे-छोटे टुकड़े हिसाब से बनाने होंगे। इस काम को आज के भूस्वामियों ने रोक रखा है। अनुभव से यह भी देखा गया है कि जब तक गाँव की सारा-का-सारा जमीन का निजी मालकियत नहीं मिटेगी, तब तक नये सिरे से चकबन्दी करना अशक्य है।

परिश्रम का सुफल

राजा के दूसरे प्रश्न का उत्तर आज भी यह है कि मैं घर में रोज खेती का काम करता था। मजदूर-वर्ग में जाने के बाद रोज २०० घनफुट काम करना पड़ा था। जेल में लगातार ३ साल रहना पड़ा। वहाँ अपने अज्ञान के कारण परिश्रम से वंचित रहा। उसके बाद सेवाग्राम-आश्रम में भी ४ साल परिश्रम से अलग रहा। इसका कारण पढ़ने का व्यसन था। रोज नाममात्र थोड़ा-सा श्रम चलता था। सात साल के दरमियान में शरीर ऐसा बना कि उठना-बैठना, घूमना, काम करना आदि समाप्त ही हो गया। शरीर की निर्बलता के कारण दिन-ब-दिन काफी निराश होता रहा। सोचने लगा कि पहले तो मैं जंगल के आदमी जैसा था, अब शरीर ऐसा क्यों हो गया ? काम के बिना ऊब गया था। यह भी मन में विचार आया कि रेल की पटरी पर कूद कर आत्महत्या कर लूँ। डाक्टरों से शरीर का निदान करवाया। उन्होंने कहा कि शरीर स्वस्थ करने के लिए ४०००) खर्च करना होगा और ६ महीने इलाज करना पड़ेगा। तब तो निराशा और अधिक बढ़ गयी। शरीर काफी दुर्बल हो गया।

यात्रा करो, तालाब खोदो !

एक दिन भगवान् बुद्ध का एक वाक्य पढ़ने में आया। भगवान् बुद्ध बीमार शिष्य से कहते हैं—'बीमारी से मुक्ति पानी हो, तो दो काम करने होंगे—(१) ४००-५०० मील पैदल तीर्थयात्रा करो, (२) अकेले ही ४००-५०० पशुओं के पीने के लिए एक तालाब खोदो।' इन दोनों विचारों के बारे में बहुत कुछ सोचा। अमल में लाने के लिए मेरे शरीर में बल नहीं था। आखिर हिम्मत करके २५ जनवरी '५० को पैदल निकल पड़ा। ६ महीने में १५०० मील प्रवास हुआ। तीर्थस्थान तथा भौगोलिक स्थान भी देखे। मैसूर में रेल में भ्रमण किया। ६ महीने में लगातार ४० मील चलने की शक्ति प्राप्त की, तब आश्रम लौटा।

आश्रम लौट कर मैं खेती के काम में लग गया और छोटी खेती का प्रारम्भ हुआ, जिसमें हर प्रक्रिया हाथों से करनी होती थी। आखिर शरीर ऐसा बना कि १६ घंटे लगातार काम करने से भी वह थकता नहीं था। आश्रम में नित्य दो समय प्रार्थना होती थी। अनुभव से देखा कि प्रार्थना के समय चित्त एकाग्र नहीं हो पाता था। नित्य-निरंतर खेती की उपासना के बाद ऐसा महसूस हुआ कि खेत में जाते ही चित्त एकाग्र हो जाता था। विकारों का दमन बहुत कुछ हासिल किया, सर्दी, गर्मी, वर्षा सब मेरे लिए एकसमान हो गयी। यह सब भगवान् बुद्ध के वाक्य का चमत्कार है। घर में मेहनत होती थी, आज भी हो रही है। उन दोनों में बहुत अन्तर है। कई सालों से खेती की डायरी लिखते रहने से मालूम हुआ कि ठीक ढंग से काश्त करनी हो, तो फी एकड़ साल भर में डेढ़ आदमी की जरूरत है। तब भारत की ३० करोड़ एकड़ जमीन के लिए कितने आदमियों की जरूरत है, इसका अन्दाज लगा सकते हैं। सौ प्रतिशत बड़े किसान मजदूरी पर निर्भर रहते हैं। उन्हें देख कर छोटे किसान भी उसी रास्ते पर जा रहे हैं।

जहाँ मजदूर है, वहाँ श्रम कभी ठीक से नहीं हो सकता। वहाँ पैदावार भी कम होती है और अनाज भी सत्त्वहीन बन जाता है। आज के बाजार के ढंग से, अनाज की मिलावट से उसकी हैसियत और भी बिगड़ी है। यदि शरीर को निर्मल और सबल रखना है, तो खेती की उपासना करनी होगी और जीवनोपयोगी सब चीजें तैयार करनी होंगी।

सम्पत्ति-दान-यज्ञ के दान-पत्र का नया नमूना

[यह पळनी में स्वीकृत नया नमूना है। इसके अनुसार प्रांतीय भाषाओं में भी हो]

पूज्य विनोबाजी ने भारतीय परम्परा के अनुसार आर्थिक क्रांति की अहिंसक प्रक्रिया को सम्पूर्ण रूप देने की दृष्टि से लोगों से भूमि के अलावा अपनी संपत्ति की आय का छठा हिस्सा देते रहने की माँग की है। भूमि न होने के कारण जो लोग भूमिदान-यज्ञ में हिस्सा नहीं ले सकते थे, उनके लिए भी अब इस पवित्र काम में शामिल होने का रास्ता खुल गया है। दरिद्रनारायण की सेवा के लिए किये गये उनके आवाहन पर मैं सम्पत्तिदान-यज्ञ में शरीक होता हूँ। मैं सम्पत्तिदान-यज्ञ की योजना के अनुसार उसमें अपना हिस्सा अर्पण कर उसका विनियोग करता रहूँगा तथा उसके खर्च का वार्षिक हिसाब जिले के सर्वोदय-कार्यालय को या सर्व-सेवा-संघ को भेजता रहूँगा।

अपने इस संकल्प का अंतर्यामी रूप में मैं ही साक्षी हूँ और अपनी अंतरात्मा से वफादार रहूँगा। ईश्वर मुझे बल दे।

मेरी वर्तमान आय का अंदाज : मासिक। वार्षिक.....

फिलहाल हिस्से का परिमाण : आय का हिस्सा.....वाँ

तारीख..... हस्ताक्षर.....

पूरा नाम और पता.....

(सूचना :—दान-पत्र भर कर जिले के सर्वोदय-कार्यालय में या सर्व-सेवा-संघ, पो० बुनियादगंज (गया-बिहार) को भेजा जाना चाहिए।)

---

www.vinoba.in

तमिलनाड की क्रांतियात्रा से–

(निर्मला देशपांडे)

पलनी के तंत्रमुक्ति के प्रस्ताव का प्रांत-प्रांत में उत्साह से जो स्वागत हो रहा है, उसकी खबरें यहाँ सबका उत्साह बढ़ा रही हैं। तंत्रमुक्ति के साथ साहित्य-प्रचार की महिमा का सतत वर्णन करते हुए विनोबाजी कहते हैं, "हमारे कार्यकर्ता गाँव-गाँव घूमेंगे, तो उनके साथ पूरा साहित्य भी चाहिए। सेना आगे चली जायेगी और गोला-बारूद पहुँचने में देरी होगी, तो लड़ाई कैसे जीतोगे?" इसी बारे में उन्होंने एक कार्यकर्ता को लिखा : "सरस्वती की उपेक्षा करके अग्नि और इंद्र का भी काम बनता नहीं, ऐसा वेदों में दिखाई देता है। ऋषि कहता है कि मैं सरस्वतीयुक्त इंद्राग्नि की उपासना करता हूं।"

"सत्याग्रही लोक-सेवक" के प्रतिज्ञा-पत्र में आखरी वाक्य है, "मैं अपना चिन्तन-सर्वस्व इस काम के लिए अर्पण करूँगा।" इस पर एक सहयात्री ने पूछा, "चिन्तन-सर्वस्व अर्पण करना तो सिर्फ ज्ञानियों के लिए ही संभव होगा। सामान्य व्यक्तियों के लिए वह कैसे संभव होगा?" इस पर विनोबाजी ने कहा, "उस शब्द का चाहे जितना सूक्ष्म अर्थ किया जा सकता है। सूक्ष्म दृष्टि से यह कहना ठीक है कि वह चिन्तन-सर्वस्व अर्पण करना ज्ञानियों के लिए ही संभव है। लेकिन हम सबको वह आदर्श सामने रखना है। वह हमारा 'फेथ'–विश्वास–है। यदि व्यक्ति किसी एक विचार के भावित हो जाय, तो उसके मन में दूसरा विचार ही नहीं आयेगा। सहयात्री ने कहा, "शायद एक-दो साल के लिए यह संभव होगा कि क्रांति के सिवाय दूसरा विचार ही मन में न आये, लेकिन क्या जीवन भर के लिए यह संभव है?" विनोबाजी ने कहा, 'क्या व्यक्ति यह चाहता है कि उसकी प्रिय वस्तु उसके पास दो साल ही रहे? अगर किसी से पूछा जाय कि क्या तुम यह चाहते हो कि तुम्हारी माता तुम्हारे साथ पाँच साल रहे? या जीवन भर रहे यह चाहते हो? तो वह यही कहेगा कि जीवन भर साथ रहे। इसलिए जब यह सवाल उठता है कि क्रांति-विचार दो साल मन में रहे या जीवन भर रहे, तब इसके मानी यह है कि वह विचार अभी उतना प्रिय नहीं हुआ है। अगर वह विचार वास्तव में प्रिय हुआ, तो व्यक्ति चाहेगा कि वह जीवन भर मन में रहे।"

एक कार्यकर्ता से विनोबाजी काम के तरीके के बारे में चर्चा कर रहे थे। उस भाई ने कहा, "दूसरों के साथ पहले मेरी नहीं पटती थी, लेकिन अब खूब पटती है।" विनोबाजी ने कहा, "अरे यही तो चन्द्रलक्षण है, सूर्यलक्षण नहीं है। चन्द्र मन की देवता है और सूर्य बुद्धि की। चन्द्र कभी प्रतिपदा का होता है, कभी अष्टमी का, कभी पूर्णिमा का, तो कभी अमावस्या का।" इसलिए जो मन के अधीन है, उसकी चन्द्र की-सी हालत होती है। कभी उसकी किसी से बनती नहीं, तो कभी खूब बनती है। तुम अपनी डायरी में रोज लिखते जाओ कि आज शुक्ल अष्टमी है, कल कृष्ण एकादशी। चन्द्र कभी क्षीण होता है, तो कभी तेजस्वी।

> "लेकिन जो मन से ऊपर उठ कर बुद्धि से काम करते हैं, उनके लिए सूर्य के समान सतत प्रकाश ही रहता है।" विनोबाजी ने आगे कहा, "हममें हर एक के सिर्फ गुण ही ग्रहण करने की वृत्ति होनी चाहिए। चाहे धूल में पचासों चीजें पड़ी हों, तो भी लोहचुम्बक सिर्फ लोहकणों को ही खींचता है। अगर हम दूसरों के दोष ही देखा करेंगे, तो हमारा मन कूड़े के ढेर के जैसा बनेगा। दीपक कभी अंधेरे को देखता ही नहीं। चाहे सारी दुनिया में अंधेरा हो, तो भी इर्दगिर्द प्रकाश ही रहता है।"

पैरिस से आये हुए एक भाई ने विनोबाजी से कहा कि "यूरोप में भू-दान के बारे में जानने की जितनी उत्सुकता है, उतनी यहाँ के दिल्ली-बम्बई जैसे शहरों में नहीं हैं।" विनोबाजी ने कहा, "यहाँ के शहरवालों के दिमाग पर अभी पश्चिम की हवा का असर है। इसलिए वे चीजों का महत्त्व समझते नहीं। लेकिन कोई चीज बन जायेगी, तब समझेंगे। यूरोपवाले लोग लड़ाई की तकलीफें काफी भुगत चुके हैं, इसलिए उन्हें इस काम के अहिंसक तरीके का आकर्षण होता हैं। परंतु हमारे शहरवालों में यह दृष्टि नहीं है, वे सिर्फ आर्थिक दृष्टिकोण से ही देखते हैं। समझने की जरूरत है कि कल विश्वयुद्ध शुरू हो जाय, तो आपकी कुल पंचवर्षीय योजना ही खतम हो जायगी। तब ग्रामदान ही गाँवों को बचा सकेगा।"

तमिलनाड की गत सात महीनों की यात्रा में 'दक्षिण के शिवम्' के मस्तक पर भक्तिजल का अखंड अभिषेक हो रहा था। मीलों की लंबाई तेजी से बढ़ती जा रही थी, पर दानपत्रों की तथा एकड़ों की संख्या अत्यंत धीमी गति से आगे बढ़ रही थी। हिंदुस्तान भर के कार्यकर्ताओं को आश्चर्य हो रहा था। बाबा की यात्रा का भी असर नहीं हो रहा है, तो क्या भूदान-आंदोलन पीछे ही हट रहा है? तपस्या को तीव्र करने की दृष्टि से दिन में दो बार चलना भी शुरू हुआ, तमिल साहित्य द्वारा तमिलों के हृदय से अपना हृदय भी जोड़ा जा रहा था और वे कहते ही जाते थे कि तमिलनाड की भूमि में ग्रामदान खूब होगा; लेकिन दिन ऐसे ही बीतते जाते थे और 'अशुतोष' के प्रसन्न होने के कोई लक्षण नहीं दिखाई दे रहे थे। लेकिन ये सब बातें तो 'नींव के पत्थरों' के समान ग्रामदान की इमारत उठाने की तैयारी ही कर रहीं थीं। आखिर मीनाक्षी माता प्रसन्न हुई और उसके आशीष-पुष्पों के रूप में ग्रामदानों की वर्षा आरंभ हुई। 'जिस दिन ग्रामदान नहीं मिलेगा, उस दिन मुझे फाका हुआ समझो।'–बाबा ने कार्यकर्ताओं से कह दिया और माता ने बालक को एक भी दिन भूखा नहीं रहने दिया। गत पंद्रह-बीस दिनों से प्रतिदिन दो-एक ग्रामदान मिलते ही गये और अब मदुरा जिले के ग्रामदानों की संख्या साठ तक पहुँची है।

'कल्लुपट्टी' का आश्रम तमिलनाड का रचनात्मक कार्यों का एक प्रमुख केन्द्र है, जहाँ नयी तालीम, खादी, ग्रामोद्योग आदि नौ संस्थाएँ हैं, जिनमें मद्रास सरकार की सहायता से ग्रामसेवक विद्यालय चलता है। सरकारी विकास-योजना के लिए भी यही क्षेत्र चुना गया है। विकास-योजना के अधिकारी, जो पुराने रचनात्मक कार्यकर्ता हैं, उत्साह से ग्रामदान के काम में लगे हैं और उन्होंने अपने क्षेत्र में दस ग्रामदान हासिल किये। श्री व्यंकटाचलपति ने, जो आश्रम के प्रमुख संस्थापकों में से हैं और जो इन दिनों मद्रास-सरकार की विकास-योजनाओं के प्रमुख हैं, अपना तीसरा हिस्सा संपत्तिदान में दिया है। विख्यात गांधीवादी अर्थशास्त्रज्ञ श्री जो० कॉ० कुमारप्पाजी ने अब कल्लुपट्टी को ही अपना स्थान बना लिया है। विनोबाजी और कुमारप्पाजी की काफी देर तक एकान्त-चर्चा हुई। कुमारप्पाजी ने अपनी कुटी की हर छोटी-छोटी वस्तु की जानकारी विनोबाजी को दी, जिसमें ग्रामोद्योग के विकास की दृष्टि से सारा अयोजन किया हुआ था। कल्लुपट्टी के विद्यार्थी तथा शिक्षकों ने मिल कर, जो इन दिनों भूदान का काम करते हैं, पाँच साल तक, हर साल चार हजार रु०का संपत्तिदान देने का तय किया है। ईसा मसीह के जन्मदिन पर विनोबाजी का मुकाम कल्लुपट्टी में था, जिसका जिक्र करते हुए उन्होंने कहा, "पडोसी पर अपने समान प्यार करो, इस छोटे से वाक्य के जरिये ईसा मसीह ने एक महान संदेश दिया है और पड़ोसी पर अपने समान प्यार क्यों करना चाहिए, इसका कारण शंकराचार्य का वेदान्त बताता है एवं वेदांत भूदान-यज्ञ की बुनियाद है।"

मदुरा में एक सुन्दर अनुभव आया यहाँ। की आम सभा में काँग्रेस, प्रजासमाजवादी, कम्युनिस्ट, द्रविड़कलहम् और रचनात्मक कार्यकर्ता; ये सब एक मंच पर आये, जब कि आज इलेक्शन के कारण इनमें कशमकश बढ़ रही है। सब पार्टीवालों ने, जिनमें कम्युनिस्ट भी शामिल थे, कहा कि भूदान के काम को बढावा देना चाहिए। तमिलनाड में इस तरह सब पार्टियों को एक करने में सबसे ज्यादा सफलता मदुरा में मिली, ऐसा विनोबाजी ने अपने भाषण में कहा।

विनोबाजी की यात्रा १२ मार्च तक तमिलनाड में चलेगी। उसके बाद कन्याकुमारी से केरल में प्रवेश होगा। पचास दिनों तक केरल की यात्रा चलेगी, बाद में वे मैसूर राज्य में प्रवेश करेंगे।

ग्रामदान याने—

ग्रामदान का अर्थ थोड़े में यह है कि आज गाँव में एकाध मनुष्य फाका करता है, पर ग्रामदान के बाद फाका करने का मौका आया, तो सब मिल कर फाका करेंगे। आज एकाध मनुष्य अपने खेत में उपज बढ़ाता है, तो ग्रामदान के बाद सब मिल कर बढ़ावेंगे। आज गरीबी के कारण एकाध मनुष्य चोरी करता है, ग्रामदान के बाद चोरी करने का मौका आया, तो सब मिल कर चोरी करेंगे। आज एकाध मनुष्य भीख माँगता है। ग्रामदान के बाद भीख माँगने का मौका आया, तो सब मिल कर भीख माँगेंगे। इसका नाम है-"ग्रामदान!"

> ग्रामदान के भिन्न-भिन्न चित्र होंगे। लेकिन मुख्य वस्तु उसमें यह है कि उसके जरिये हम सरकारी शक्ति से भिन्न, हिंसा-शक्ति के विरुद्ध, ऐसी 'जनशक्ति' का निर्माण करेंगे। ग्रामदान तो भूदान का फल है। भूदान बीज है, इसलिए भूदान भी माँगना चाहिए और ग्रामदान तक पहुँचना चाहिए।

चिन्नकट्टलै, मदुरा २३,२६-१२ —विनोबा

www.vinoba.in

लायसेन्स नं. ए. ३४ रजिस्टर्ड नंबर ए. ३५४
पहले से डाक-महसूल दिये बिना भेजने का परवाना प्राप्त)

क्रांति की चिनगारियाँ

* भूक्रांति के महान् अनुष्ठान में हिस्सा लेने के लिए श्रमभारती, खादीग्राम (मुंगेर) के छात्र, अध्यापक एवं कार्यकर्ताओं ने एक वर्ष, सन् '५७ के लिए श्रमभारती बंद करने का निश्चय किया। २६ जनवरी को खादीग्राम का वार्षिकोत्सव मना कर तथा ग्रामराज-सम्मेलन समाप्त कर विद्यालय के सभी छात्र, अध्यापक, स्त्री-बच्चे भूक्रांति के लिए पदयात्रा पर निकल जायँगे। मुंगेर जिले के करीब १००० गाँवों में भूमिहीनता मिटाते हुए ग्रामराज्य-विचार का संदेश वे पहुँचायेंगे।

* महाराष्ट्र में अब तक ५० ग्रामदान मिले हैं। सर्वोदय-सम्मेलन के बाद जब विनोबाजी महाराष्ट्र में प्रवेश करेंगे, तब हजार ग्रामदानों द्वारा उनका स्वागत किया जाय, ऐसी योजना महाराष्ट्र के कार्यकर्ता बना रहे हैं।

* महाराष्ट्र के धापोली गाँव में लो० तिलक की जमीन भूदान में अर्पित की गयी है।

* मई में कर्नाटक में होने वाले आगामी सर्वोदय-संमेलन में देश के विभिन्न स्थानों से छात्र और नवयुवकों की टोलियाँ पदयात्रा करते हुए पहुँचेंगी, ऐसी योजना खादीग्राम में हुए अ.भा. छात्र-कार्यकर्ता-शिविर में स्वीकृत हुई है।

* बाँसवाडा जिला-सेवा-संघ (राजस्थान) के बाबा लक्ष्मणदासजी अपना आश्रम छोड़ कर १ जनवरी से एक वर्ष के लिए भूक्रांति के लिए निकल पड़े हैं।

* इलाहाबाद विश्वविद्यालय के एम. ए. के छात्र श्री मृत्युंजय प्रसादजी ने श्री जयप्रकाशजी के आवाहन पर १ जनवरी से कॉलेज छोड़ कर भूदान-आंदोलन में लगने का संकल्प किया है।

मदुरा जिले में ६ जनवरी '५७ तक १०० ग्रामदान मिल चुके हैं।

वर्धा : क्रांति-पथ पर

ता० १ जनवरी '५७ को बापू-कुटी के सामने सेवाग्राम में वर्धा के १०-१२ भूदान-लोक-सेवकों को साल भर के लिए विदाई देने का समारंभ श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम के मार्गदर्शन में हुआ, जहाँ सभी संस्थाओं के लोग उपस्थित थे। निधि-मुक्त और तंत्र-मुक्त होकर मंत्र-संबलयुक्त एक साल के वनगमन को बापू का आशीर्वाद प्राप्त हो, इसलिए ये लोकसेवक वहाँ इकट्ठे हुए थे। सुबह साढ़ेसात बजे प्रार्थना-कताई आदि हुई और सब धर्मों की चुनी हुई प्रार्थनाएँ हुईं। बाइबल का संबंधित अंश भी पढ़ा गया। सेवकों ने बापू के आसन को वंदन किया। सबके हृदय गद्गद हो गये थे। आशादेवी ने अपने वात्सल्य भरे आशीर्वाद से उनका पाथेय संपन्न कर दिया।

पदयात्री-टोली जब रात मिरापुर गाँव में पहुँची, तो चार स्थानीय लोगों ने एक साल की जेल स्वीकार की। एक भाई के घर में बहुत अड़चनें थीं, फिर भी वे पदयात्रा में शामिल हो ही गये।

तालीमी संघ के विद्यार्थी और कार्यकर्ता भी विभिन्न प्रांतों में पदयात्रा के लिए जायेंगे।

——

राजस्थान के कार्यकर्ताओं का संकल्प

जयपुर में ता० २०-२१ दिसंबर को राजस्थान के करीब १५० भूदान-कार्यकर्ताओं का सम्मेलन तंत्र-विसर्जन एवं निधि-मुक्ति के संबंध में विचारविनिमय करके भावी कार्यक्रम निर्धारित करने के लिए श्री गोकुलभाई भट्ट की अध्यक्षता में हुआ। श्री सिद्धराज ढड्ढा और गांधी-स्मारक-निधि के मंत्री श्री धोत्रेजी ने भी भाग लिया। निर्णय हुआ कि प्रांत के २६ जिलों के लिए २६ जिला-सेवक होंगे, जो सत्य-अहिंसा एवं अपरिग्रह में विश्वास रखते हुए पक्षातीत रह कर भूदान-आंदोलन की सफलता के लिए प्रयत्न और चिंतन करने में पूरा समय देंगे। इसके लिए आवाहन करने पर करीब ३० कार्यकर्ताओं ने संकल्प किये, जिनमें २६ जिला-सेवक होंगे और शेष लोक-सेवक के रूप में उनको सहयोग देंगे। आंदोलन-प्रचार-प्रकाशन, ग्राम-निर्माण एवं प्रांत के कार्यकर्ताओं से संपर्क साधने आदि का कार्य राजस्थान समग्र-सेवा-संघ करेगा। कार्यकर्ताओं ने उत्साह के साथ अपने-अपने जिले का कार्यक्रम बना कर आंदोलन को सफल बनाने का संकल्प किया।

प्रकाशन-समाचार

'सर्वोदय-स्वाध्याय-योजना-१९५७' के लिए निम्न साहित्य तैयार हो चुका है, जो सदस्य बनने पर, जनवरी के अंत में प्राप्त हो सकता है।

१—भूदान यज्ञ : क्या और क्यों ? श्री चारूचन्द्र भण्डारी, पृष्ठ ३००, मूल्य १ रु०
इस पुस्तक में भूदान-आन्दोलन का समग्र दर्शन और सांस्कृतिक भूमिका है।

२—छात्रों के बीच श्री जयप्रकाश नारायण, पृष्ठ ४८, मूल्य ४ आना
सर्वोदय के व्यावहारिक दर्शन पर पटना-कालेज के मैदान में छात्र-प्रतिनिधियों के बीच दिया हुआ महत्त्वपूर्ण भाषण।

३—ब्याजबट्टा श्री अप्पासाहब पटवर्धन, पृष्ठ ४८, मूल्य ४ आना
सूदखोरी कितना बड़ा पाप है, यह तपस्वी लेखक ने विभिन्न धर्मों के उद्धरणों से सिद्ध किया है।

४—सर्वोदय-पद-यात्रा श्री दामोदरदास मूँदड़ा, पृष्ठ २२५, मूल्य १ रुपया
७ मार्च'५१ को सेवाग्राम से शिवरामपल्ली सर्वोदय-सम्मेलन के लिए विनोबाजी की पहली पद-यात्रा प्रारंभ हुई। मार्ग के गाँवों में सर्वोदय, स्वराज्य, ग्रामोद्योग, खादी आदि का पावन संदेश विनोबाजी ने सुनाया, वही उक्त पुस्तक में है।

५—ज्ञानदेव-चिन्तनिका विनोबा, अनु० श्री दामोदरदास मूँदड़ा, पृष्ठ १४८, मूल्य १२ आना। ज्ञानदेव के ज्ञान-संदेश पर विनोबाजी का अनुपम चिन्तन।

६—पहली रोटी श्री आशाराम वर्मा, पृष्ठ ४०, मूल्य ४ आना
बाल-मन के अनुरूप गेय सामग्री के माध्यम से तीन श्रम-संगीतिकाएँ।

७—जनक्रांति की दिशा में विनोबा, पृष्ठ ८०, मूल्य ४ आना
१९५७ के लिए विनोबाजी के आवाहन की मार्गदर्शिका।

८—राजनीतिसे लोकनीतिकी ओर सर्वोदय के तत्त्वचिंतक, पृष्ठ १२४, मूल्य ८ आना
लोकनीति क्या और क्यों तथा सर्वोदय की मूलगामी राजनीति का विवेचन।

९—नक्षत्रों की छाया में श्र कृष्णदत्त भट्ट, पृष्ठ ३३०, मूल्य १॥ रु०
विनोबा के जीवन, दर्शन, पर्यटन, आध्यात्मिक भूमिका, भूदान-आंदोलन, लेखन आदि प्रेरणाओं का संस्मरणात्मक चिंतन।

—सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन-विभाग, राजघाट, काशी।

—६२वें काँग्रेस-अधिवेशन के समय अखिल भारत खादी-ग्रामोद्योग-मंडळ की ओर से आयोजित प्रदर्शिनी में बापू-मंडळ के समीप ही मध्यभारत के रचनात्मक कार्यकर्ता श्री रामपाल अग्रवाळ के मार्गदर्शन में भूदान-सेवकों ने घास-फूस और लिरकी से सुन्दर विनोबा-साहित्य-मंडप का निर्माण किया, जो कि अपनी सादगी और सुन्दर कलाकृतियों से प्रदर्शिनी का आकर्षण बन गया। कुछ विद्यार्थियों और भूदान-सेवकों ने भूदान साप्ताहिक के २०० ग्राहक और ३०००) के साहित्य-प्रचार का संकल्प भी किया। श्री रामपालजी विचार-प्रचार की 'युक्ति' द्वारा तंत्रमुक्ति और निधि-मुक्ति की साधना में जुट गये हैं।

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	सर्वोदय और समाजवाद	विनोबा	१
२.	काँग्रेस और सर्वोदय	ढेबरभाई	२
३.	यज्ञ की पूर्णाहुति का समय आ गया है !	बाबा राघवदास	३
४.	पावन वेळा (कविता)	गुलाब खंडेलवाल	३
५.	विनोबा-प्रवचन-सार	विनोबा	४
६.	महाराष्ट्र के अनन्य संत स्व. गाड़गे बाबा !	उत्तमराव कंकाले	५
७.	स्वर्गीय आपटेजी !	विनोबा	५
८.	तालीम के त्रिदोष	,,	६
८.	आम बराबर गेहूँ !	टॉलस्टॉय	६
१०.	सच्चे मूल्यों की कसौटी	दादा धर्माधिकारी	७
११.	"मामेकं शरणं व्रज !"	नेमिशरण मित्तल	७
१२.	ग्रामदानियों के बीच विनोबाजी	निर्मला देशपांडे	८
१३.	शंकर की भूमि पर	माम्मन	९
१४.	खेती के मेरे कुछ विशेष अनुभव	गोविंद रेड्डी	१०
१५.	तमिलनाड की क्रांतियात्रा से	निर्मला देशपांडे	११
१६.	क्रांति की चिनगारियाँ, प्रकाशन-समाचार आदि	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : पोस्ट बॉक्स नं०४१, राजघाट, काशी।

www.vinoba.in